दृष्टि The Vision

एडिटोरियल

(संग्रह)

दिसंबर भाग-1, 2020

दृष्टि, 641, प्रथम तल, डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली-110009

फोन: 8750187501

ई-मेल: online@groupdrishti.com

अनुक्रम

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम **5**

- महामारी और शहरी नियोजन 5
- पीएम वाणी योजना 7

आर्थिक घटनाक्रम **9**

- भारतीय कृषि मंडी प्रणाली 9
- डिजिटल रुपया: आवश्यकता और महत्त्व 11
- औद्योगिक समूहों को बैंक स्वामित्व की अनुमति 13
- फिनटेक: चुनौतियाँ और संभावनाएँ 15

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम **18**

- शंघाई सहयोग संगठन और भारत 18
- भारत-वियतनाम संबंध 21
- वैश्विक ऊर्जा संक्रमण 23
- मानव अधिकारों के बदलते प्रतिमान 24

नोट :

सामाजिक न्याय 27

- वन अधिकार कानूनों का कार्यान्वयन 27
- भारत में दिव्यांगता: समस्याएँ एवं समाधान 29
- कुपोषण, COVID-19 और पोषण माह 31

दृष्टि The Vision

नोट :

नोट :

संवैधानिक/प्रशासनिक घटनाक्रम

महामारी और शहरी नियोजन

संदर्भ:

पिछले मानसून सत्र में संसद द्वारा पारित नए कृषि अधिनियमों ने सरकार और किसानों के बीच टकराव की एक गंभीर स्थिति पैदा कर दी है, हालाँकि सरकार कथित तौर पर इन अधिनियमों में सुधार के लिये तैयार हो गई है परंतु किसानों की मांग है कि इन अधिनियमों को निरस्त कर दिया जाए और यदि आवश्यक हो तो किसानों और अन्य हितधारकों के साथ चर्चा के बाद ही इसके लिये नए कानून बनाए जाएँ।

संसद द्वारा पारित इन अधिनियमों को निरस्त किये जाने की मांग हाल के वर्षों में संसद में विधायी कार्यों के प्रबंधन में एक गंभीर चूक की तरफ संकेत करती है। विधायी कार्यों के प्रबंधन में हुई इन कमियों को अक्सर संसदीय समितियों को दरकिनार किये जाने और अध्यादेशों के प्रयोग में वृद्धि के रूप में देखा जा सकता है।

चूँकि संसद लोकतंत्र की प्रतीक है, ऐसे में संसदीय कार्यप्रणाली की गुणवत्ता में गिरावट की जाँच करना और इसके प्रति लोगों के विश्वास को मज़बूती प्रदान करना सरकार की ज़िम्मेदारी है।

संसदीय समितियाँ: पृष्ठभूमि:

- अपनी समितियों के माध्यम से विस्तृत जाँच द्वारा कानूनों या उसके कुछ हिस्सों में सुधार करने हेतु संसद की ऐतिहासिक रूप से एक प्राचीन प्रथा रही है।
- वास्तव में ब्रिटिश संसद में यह प्रणाली 16वीं शताब्दी से ही लागू है।
- भारत में संसदीय जाँच के इतिहास को 'मांटेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधार' (Montagu–Chelmsford Reforms) से जोड़कर देखा जा सकता है।
- ग़ौरतलब है कि 'केंद्रीय विधानसभा' जो कि 'ब्रिटिश भारत' की संसद थी, ने तीन समितियाँ गठित की थीं।
  - विधेयकों से संबंधित याचिकाओं पर समिति।
  - स्थायी आदेशों के संशोधन पर चयन समिति।
  - विधेयकों पर चयन समिति।
- इस प्रकार देखा जा सकता है कि औपनिवेशिक काल में भी संसद ने सरकार द्वारा सदन में लाए गए विधेयकों की संसदीय जाँच की आवश्यकता और उपयोगिता को स्वीकार किया था।
- स्वतंत्र भारत की संसद ने विधेयकों के साथ-साथ शासन के विभिन्न पहलुओं की जाँच करने के लिये महत्त्वपूर्ण समितियों के एक विशाल तंत्र की स्थापना की।
  - वर्ष 1993 में विभाग संबंधी स्थायी समितियों (DRSCs) के गठन से पहले भारतीय संसद द्वारा सरकार के महत्त्वपूर्ण विधायी प्रस्तावों की विस्तृत जाँच हेतु चयन समितियों और संयुक्त चयन समितियों का गठन किया जाता था।

संसदीय समिति प्रणाली का महत्त्व:

- अंतर-मंत्रालयी समन्वय: इन समितियों को संबंधित मंत्रालयों / विभागों की अनुदान मांगों को देखने, उनसे जुड़े विधेयकों की जाँच, उनकी वार्षिक रिपोर्ट और दीर्घकालिक योजनाओं पर विचार करने तथा संसद को रिपोर्ट करने का कार्य सौंपा जाता है।
- विस्तृत जाँच का साधन: आमतौर पर संसदीय समितियों की रिपोर्टें बहुत ही विस्तृत होती हैं और शासन से संबंधित मामलों पर प्रामाणिक जानकारी प्रदान करती हैं।
- इन समितियों से संदर्भित विधेयक महत्त्वपूर्ण मूल्यवर्द्धन के साथ सदन में वापस आते हैं।
- स्थायी समितियों के अलावा संसद के सदनों द्वारा विशिष्ट विषयों की जाँच और उनकी रिपोर्ट करने के लिये 'तदर्थ समितियों' (Adhoc Committees) का गठन किया जाता है, इन समितियों को किसी विधेयक का बारीकी से अध्ययन करने और सदन को वापस इसकी रिपोर्ट प्रस्तुत करने का कार्य सौंपा जाता है।

नोट :

- इसके अतिरिक्त इन समितियों को अपने कार्य के निर्वहन के दौरान विशेषज्ञ सलाह और सार्वजनिक राय प्राप्त करने का अधिकार होता है।

एक लघु संसद के रूप में कार्य:

- ये समितियाँ दोनों सदनों के सदस्यों (सांसदों) की छोटी इकाइयाँ होती हैं और ये सदस्य अलग-अलग राजनीतिक दलों से आते हैं। ये समितियाँ पूरे वर्ष कार्य करती हैं।
  - इसके अलावा संसदीय समितियाँ लोकलुभावन मांगों को लेकर बाध्य नहीं होती हैं जो आमतौर पर संसद के काम में बाधा उत्पन्न करती हैं।
  - चूँकि समितियों की बैठकें 'बंद-दरवाज़े' के पीछे होती हैं और ऐसे में समितियों के सदस्य पार्टी व्हिप द्वारा बाध्य नहीं होते हैं, संसदीय समितियाँ बहस तथा चर्चा के लोकाचार पर कार्य करती है।
  - इसके अलावा समितियाँ सार्वजनिक चकाचौंध से दूर रहकर काम करती हैं और संसदीय कार्यवाही को संचालित करने वाले कोड, जो सदन के नए और युवा सदस्यों के लिये महत्त्वपूर्ण प्रशिक्षण संस्था है, की तुलना में अनौपचारिक बने रहते हैं।

संसदीय समिति प्रणाली का सीमांकन:

- संसदीय समिति प्रणाली की अनदेखी: पीआरएस लेजिस्लेटिव रिसर्च के आँकड़ों के अनुसार, 14वीं लोकसभा में 60% और 15वीं लोकसभा में 71% विधेयक संबंधित DRSCs को संदर्भित थे, जबकि 16वीं लोकसभा में ऐसे विधेयकों का अनुपात घटकर 27% रह गया।
- DRSCs के अलावा सदनों की संयुक्त संसदीय समितियों और चयन समितियों को संदर्भित विधेयकों की संख्या भी नगण्य ही रही।
- संयुक्त संसदीय समिति को भेजा गया आखिरी विधेयक 'भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास और पुनर्स्थापन में उचित मुआवजा और पारदर्शिता का अधिकार (दूसरा संशोधन) विधेयक, 2015' था।

अध्यक्ष या स्पीकर की भूमिका:

- किसी विधेयक को समितियों के पास भेजने का अधिकार सदन के स्पीकर या अध्यक्ष के विवेक पर निर्भर करता है।
- सदन के नियमों के अनुसार, महत्त्वपूर्ण विधेयकों को विस्तृत समीक्षा के लिये समितियों के समक्ष प्रस्तुत किया जाना चाहिये।
- हालाँकि कई बार स्पीकर या अध्यक्ष द्वारा अपने विवेक का प्रयोग करते हुए कई महत्त्वपूर्ण विधेयकों (जिनका समाज पर गंभीर प्रभाव हो सकता है) को भी समिति के लिये संदर्भित नहीं किया जाता।
- उदाहरण के लिये हालिया कृषि विधेयक अध्यादेशों के माध्यम से अधिनियमित किये गए थे और इन्हें एक स्थायी समिति को भेजे बिना ही तीन दिनों के अंदर लोकसभा से पारित कर दिया गया।

आगे की राह:

- संसदीय समिति प्रणाली को पुनर्जीवित करना:
  - संसद को व्यापक जनभागीदारी सुनिश्चित करने के लिये अपनी समिति प्रणाली को मज़बूत करने पर विशेष ध्यान देना चाहिये।
  - ब्रिटिश संसद की तरह ही भारतीय संसद को भी इस बात पर विशेष ज़ोर देना चाहिये कि प्रत्येक विधेयक पर एक समिति द्वारा व्यापक विचार-विमर्श किया जाए।
- **नियमों में संशोधन और उत्तरदायित्व:** अध्यक्ष और स्पीकर द्वारा पूरी सत्यनिष्ठा के साथ अपने उत्तरदायित्वों के निर्वहन के अलावा लोकसभा और राज्यसभा दोनों में प्रक्रिया के नियमों में संशोधन किये जाने की आवश्यकता है ताकि सभी महत्त्वपूर्ण विधेयकों को DRSCs को संदर्भित करने का प्रबंध किया जा सके।
- **नई समितियों की स्थापना:** अर्थव्यवस्था और तकनीकी के क्षेत्र में प्रगति के साथ-साथ इससे जुड़े मामलों की जटिलता में वृद्धि को देखते हुए नई संसदीय समितियों की स्थापना की आवश्यकता है। उदाहरण के लिये:
  - संघ सूची, समवर्ती सूची और राज्य सूची में अतिव्यापी सभी मामलों का विश्लेषण करने के लिये संघीय मुद्दों पर एक स्थायी समिति की स्थापना।
  - संसद में प्रस्तुत किये जाने से पहले संवैधानिक संशोधन विधेयकों की जाँच हेतु संविधान से जुड़े मामलों की एक स्थायी समिति की स्थापना।

नोट :

निष्कर्ष:

- संसद की प्राथमिक भूमिका विवेचना, चर्चा और पुनर्विचार करना है, जो किसी भी लोकतांत्रिक संस्था की पहचान है। हालाँकि संसद में विचार-विमर्श के लिये प्रस्तुत मामले बहुत ही जटिल होते हैं, जिसके कारण सदस्यों को इन्हें बेहतर तरीके से समझने के लिये तकनीकी सहायता की आवश्यकता पड़ती है।

इस प्रकार संसदीय समितियाँ सदस्यों को एक मंच प्रदान कर उनकी सहायता करती हैं जहाँ सदस्य विचार-विमर्श के दौरान संबंधित क्षेत्र के विशेषज्ञों और सरकारी अधिकारियों के साथ मिलकर कार्य कर सकते हैं। संसदीय लोकतंत्र की बेहतरी के लिये संसदीय समितियों को दरकिनार करने के बजाय उन्हें मज़बूत किया जाना आवश्यक है।

पीएम वाणी योजना

संदर्भ:

हाल ही में देश भर में ब्रॉडबैंड इंटरनेट के प्रसार को बढ़ावा देने के लिये भारत सरकार द्वारा 'प्रधानमंत्री वाई-फाई एक्सेस नेटवर्क इंटरफेस' (Prime Minister WiFi Access Network Interface) या 'प्रधानमंत्री वाणी (PM- WANI) योजना' की शुरुआत की गई है। इस योजना का लक्ष्य देश भर में इंटरनेट कनेक्टिविटी और डिजिटल पहुँच में सुधार के लिये बड़े पैमाने पर वाई-फाई हॉटस्पॉट की स्थापना करना है। इस योजना के तहत स्थानीय किराना और निकटवर्ती दुकानों द्वारा 'सार्वजनिक डेटा कार्यालयों' (PDO) के माध्यम से वाई-फाई नेटवर्क या एक्सेस पॉइंट की स्थापना करने की परिकल्पना की गई है। PDO की स्थापना 'सार्वजनिक कॉल कार्यालय' (PCO) की तर्ज पर की जाएगी और इसके लिये किसी भी प्रकार के लाइसेंस, शुल्क या पंजीकरण की आवश्यकता नहीं होगी।

सार्वजनिक वाई-फाई नेटवर्क अब तक इंटरनेट की पहुँच से बाहर रहे लोगों के लिये एक वहनीय विकल्प और अर्थव्यवस्था की वृद्धि में सहायक होने के साथ ही तकनीकी क्षेत्र में भी क्रांति ला सकता है तथा देश भर में वाई-फाई की उपलब्धता में काफी सुधार ला सकता है।

पीएम वाणी के संभावित लाभ:

- इंटरनेट उपयोगकर्त्ताओं की नई लहर: पीएम वाणी न केवल वाणिज्यिक और मनोरंजन से जुड़े उद्देश्यों के लिये बल्कि शिक्षा, टेलीहेल्थ और कृषि विस्तार हेतु उपयोगकर्त्ताओं की एक नई लहर को जोड़ने में सक्षम होगी, साथ ही यह पारदर्शिता और अंतर-क्रियाशीलता को बढ़ाकर सरकार को अधिक जवाबदेह भी बनाएगी।
- डिजिटल इंडिया हेतु मज़बूत तंत्र: इस योजना के माध्यम से छोटे दुकानदार वाई-फाई सेवा प्रदान कर सकेंगे। यह उनकी आय को बढ़ावा देगा और साथ ही युवाओं के लिये निर्बाध इंटरनेट कनेक्टिविटी सुनिश्चित करेगा।
  - यह डिजिटल इंडिया मिशन को भी मज़बूती प्रदान करेगा।
- लालफीताशाही से निपटने में सहायक: सरकार को उम्मीद है कि पीएम वाणी के माध्यम से नौकरशाही की जटिलता से बचते हुए लाइसेंस और शुल्क को समाप्त कर एक चाय दुकान मालिक के लिये सेवा प्रदाता के रूप में ऑनलाइन पंजीकरण करना आसान बनाया जा सकेगा, जिसके परिणामस्वरूप उसे आय के नए अवसर मिल सकेंगे।
- अर्थव्यवस्था पर दूरगामी प्रभाव: भारतीय दूरसंचार विनियामक प्राधिकरण (TRAI) की एक रिपोर्ट के अनुसार, वाणी योजना के तहत प्रस्तावित तंत्र के ज़रिये वाई-फाई प्रणाली की स्थापना से इंटरनेट की पहुँच में 10% की वृद्धि हो सकती है, जिसके कारण देश के सकल घरेलू उत्पाद में 1.4% की वृद्धि होने का अनुमान है।
- **डिजिटल डिवाइड:** पीएम वाणी ग्रामीण भारत में इंटरनेट के तीव्र विस्तार में सहायक हो सकती है, गौरतलब है कि हाल के वर्षों में देश में सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हुई व्यापक प्रगति के बाद भी देश के ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट की पहुँच अपेक्षाकृत धीमी रही है, वर्ष 2019 में केवल 27.57% उपभोक्ता ही ग्रामीण क्षेत्र से संबंधित थे। ऐसे में 'पीएम वाणी योजना' एक परिवर्तनकारी पहल सिद्ध हो सकती है।
  - ब्रॉडबैंड फाइबर सेवा से जुड़ा वाई-फाई इंटरनेट की पहुँच में व्याप्त मौजूदा अंतर को कम करने का सबसे तीव्र और उपयुक्त विकल्प हो सकता है।
- **किफायती वैकल्पिक समाधान:** संचार के क्षेत्र में विकसित हो रही नई तकनीकें जैसे-5G अच्छी गुणवत्ता वाले डेटा प्रदान कर सकती हैं परंतु इसके लिये नए स्पेक्ट्रम और कनेक्टिविटी उपकरणों में निवेश के साथ नियमित ग्राहक शुल्क के रूप में आर्थिक दबाव बढ़ सकता है।

नोट :

- वाणी प्रणाली कम राजस्व वाले उपभोक्ताओं को जोड़ने के लिये एक रास्ता प्रदान करती है।

पीएम वाणी से जुड़ी चुनौतियाँ:

- **सुरक्षा चुनौतियाँ:** एक सार्वजनिक वाई-फाई नेटवर्क में कई सुरक्षा समस्याएँ होती हैं। ऐसा इसलिये है क्योंकि एक ही समय में बहुत से लोग एक ही स्थान पर इस नेटवर्क का उपयोग करते हैं।
  - ऐसे में सार्वजनिक वाई-फाई नेटवर्क में गोपनीय डेटा (जैसे- पासवर्ड, पिन आदि) भेजने के मामले में उच्च जोखिम बना रहता है।
- **धीमी गति:** चूँकि सार्वजनिक वाई-फाई नेटवर्क को आमतौर पर एक ही समय में कई लोगों द्वारा एक्सेस किया जाता है, इससे बैंडविड्थ की काफी हानि होती है जिसके परिणामस्वरूप नेटवर्क की गति काफी धीमी हो जाती है।
  - यही कारण है कि इसी वर्ष फेसबुक और गूगल द्वारा सार्वजनिक वाई-फाई सुविधा प्रदान करने के अपने प्रयासों को रोक दिया गया है।
- **सस्ता मोबाइल डेटा:** TRAI के अनुसार, भारत विश्व के उन देशों में शामिल है जहाँ सबसे सस्ता मोबाइल डेटा उपलब्ध है। गौरतलब है कि पिछले पाँच वर्षों में देश में मोबाइल डेटा के मूल्य में 95% की गिरावट देखी गई है।
  - वर्तमान में जब 4G डेटा की लागत में गिरावट और इसकी पहुँच भी वृद्धि हुई है, ऐसे में वर्तमान में वाई-फाई नेटवर्क की स्थापना के प्रयासों की प्रसिंगकता पर प्रश्न उठता है।

आगे की राह:

- **मज़बूत साइबर सुरक्षा अवसंरचना:** वर्तमान में इंटरनेट के संदर्भ में नागरिकों की कुछ प्रमुख अपेक्षाएँ हैं, जैसे- एक मज़बूत सेवा के साथ डेटा अखंडता की सुरक्षा, डेटा के व्यावसायिक उपयोग को लेकर पारदर्शिता और साइबर हमलों के विरुद्ध सुरक्षा आदि।
  - पीएम वाणी योजना के तहत सार्वजनिक डेटा के संरक्षण और सुरक्षा को सुनिश्चित किया जाना बहुत ही आवश्यक है, इस संदर्भ में डेटा संरक्षण विधेयक, 2019 अधिनियमित होना समय की आवश्यकता है।
- प्रतिस्पर्द्धा सुनिश्चित करना: सरकार द्वारा इस क्षेत्र में किसी एक संस्था/कंपनी के एकाधिकार को रोकने के लिये हार्डवेयर, सॉफ्टवेयर, एप और भुगतान सेवाओं से जुड़े विभिन्न सेवा प्रदाताओं की बराबर भागीदारी के साथ-साथ एक निष्पक्ष प्रतिस्पर्द्धा सुनिश्चित करने का प्रयास किया जाना चाहिये।

इसके साथ ही बढ़ी हुई प्रतिस्पर्द्धा के माध्यम से धीमी डेटा गति की समस्या का भी समाधान किया जा सकेगा।

नोट :

आर्थिक घटनाक्रम

भारतीय कृषि मंडी प्रणाली

संदर्भ:

हाल ही में केंद्र द्वारा लागू नए कृषि सुधार कानूनों के खिलाफ राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली और इसके आस-पास के क्षेत्रों में किसानों का भारी विरोध प्रदर्शन देखने को मिला। केंद्र सरकार के अनुसार, इन कृषि कानूनों [विशेषकर **'कृषि उत्पादन व्यापार और वाणिज्य (संवर्द्धन और सुविधा) अधिनियम, 2020' (FPTC Act)**] का उद्देश्य निजी मंडियों की स्थापना के माध्यम से किसानों को लाभ पहुँचाना है, ये मंडियाँ बिचौलियों की भूमिका को समाप्त कर देंगी और किसान किसी भी खरीदार को अपने उत्पाद बेचने के लिये स्वतंत्र होंगे।

हालाँकि प्रदर्शनकारी किसान इन दावों को स्वीकार नहीं करते, उनका मानना है कि अगर मंडियाँ कमज़ोर होती हैं तथा न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) के प्रति किसी मज़बूत प्रतिबद्धता के बगैर ही निजी बाज़ारों के विस्तार को प्रोत्साहित किया जाता है तो इससे समय के साथ न्यूनतम समर्थन मूल्य प्रणाली का क्षरण होगा।

ऐसे में किसानों के इस विरोध प्रदर्शन ने देश में कृषि मंडी प्रणाली और इससे जुड़े सुधारों के गहन विश्लेषण की आवश्यकता को रेखांकित किया है ताकि भारत के अन्नदाताओं के लिये कृषि की व्यावहारिकता को सुनिश्चित किया जा सके।

मंडियों के उदारीकरण का लाभ:

- **बराबरी:** सरकार द्वारा लागू किये गए कानून किसानों को बगैर किसी शोषण के भय के प्रसंस्करणकर्त्ताओं, थोक विक्रेताओं, बड़े खुदरा कारोबारियों, निर्यातकों आदि के साथ जुड़ने में सक्षम बनाते हैं।
- **अनिश्चितता का समाधान:** इन सुधारों के माध्यम से किसान निजी कंपनियों के साथ अनुबंध में शामिल हो सकेंगे जो बाज़ार की अनिश्चितता के जोखिम को किसानों से लेकर प्रायोजक को हस्तांतरित कर देगा तथा यह किसानों को आधुनिक तकनीक और बेहतर आदानों की पहुँच के लिये सक्षम बनाएगा।
- **निजी क्षेत्र की भागीदारी:** ये कानूनी सुधार राष्ट्रीय और वैश्विक बाज़ारों तक कृषि उत्पादों की पहुँच सुनिश्चित करने के लिये मज़बूत आपूर्ति शृंखला की स्थापना और कृषि अवसंरचना को मज़बूत बनाने के लिये निजी क्षेत्र के निवेश को बढ़ावा देने हेतु उत्प्रेरक का काम करेंगे।
- **बिचौलियों के हस्तक्षेप की समाप्ति:** इन कानूनों के माध्यम से किसान विपणन की प्रक्रिया में प्रत्यक्ष रूप से शामिल हो सकेंगे, जिससे बिचौलियों के हस्तक्षेप को समाप्त किया जा सकेगा और किसानों को अपनी उपज का पूरा मूल्य प्राप्त होगा।

मंडी प्रणाली को समाप्त करने की संभावित चुनौतियाँ:

- FTPC अधिनियम के पीछे एक बड़ी अवधारणा यह रही है कि **कृषि उपज विपणन समितियों** (Agricultural Produce Marketing Committees-APMC) द्वारा नियंत्रित मंडियों का ग्रामीण क्षेत्रों के क्रय बाज़ार पर एकाधिकार रहा है और कृषि बाज़ारों के उदारीकरण से किसानों को अपनी उपज का बेहतर मूल्य प्राप्त हो सकेगा।
- हालाँकि भारतीय कृषि की संगठनात्मक संरचना किसानों को उनके उत्पादों को कृषि बाज़ारों से बाहर बेचने के लिये विवश करती है।
- **मंडियों के बाहर उत्पादों की व्यापक बिक्री:** आधिकारिक आँकड़ों के अनुसार, धान और गेहूँ के मामले में क्रमशः मात्र 29% और 44% उपज को ही मंडियों में बेचा जाता है, जबकि 49% धान और 36% गेहूँ की उपज स्थानीय या अन्य निजी व्यापारियों को बेची जाती है।
- **मंडियों की अपर्याप्त संख्या:** राष्ट्रीय कृषि आयोग (National Commission on Agriculture- NCA) ने अपनी सिफारिश में कहा था कि देश में मंडियों को इस प्रकार मज़बूत किया जाना चाहिये कि कोई भी किसान मात्र एक घंटे में अपनी गाड़ी (Cart) से मंडी तक पहुँचने में सक्षम हो। इस प्रकार एक मंडी के लिये निर्धारित सेवा क्षेत्र को औसतन 80 वर्ग किलोमीटर से कम होना चाहिये।
  - हालाँकि वर्ष 2019 तक देश में कुल 6,630 मंडियाँ ही थीं, जिनका औसत सेवा क्षेत्र 463 वर्ग किलोमीटर था।

नोट :

- ऐसे में वर्तमान में देश में मंडियों की संख्या कम करने के बजाय उनकी संख्या बढ़ाए जाने की आवश्यकता है।

- **सीमांत किसानों की अधिकता:** देश में लगभग 86% कृषि योग्य भूमि का स्वामित्व छोटे अथवा सीमांत किसानों के पास है। इन किसानों के लिये विपणन योग्य अधिशेष सीमित होने के कारण मंडियों तक की परिवहन लागत को वहन करना किफायती नहीं होता है।
  - परिवहन लागत की चुनौती से बचने के लिये अधिकांश किसानों को अपनी उपज गाँव के व्यापारियों को ही बेचनी पड़ती है, भले ही कम कीमत पर क्यों न बेचना पड़े।
  - सरकार द्वारा प्रस्तावित सुधारों के बाद भले ही निजी बाज़ार पारंपरिक मंडियों का स्थान ले लें, परंतु मंडियों के व्यापक तंत्र के अभाव में छोटे और सीमांत किसानों को अपनी उपज की बिक्री के लिये स्थानीय व्यापारियों पर ही निर्भर रहना होगा।

उदारीकृत कृषि बाज़ारों में निजी निवेश की कमी:

- देश के कई राज्यों में पहले से ही किसानों को सरकारी मंडियों के बाहर अपनी उपज को बेचने की स्वतंत्रता दी गई है।
- देश के 18 राज्यों में APMCs के बाहर निजी मंडियों की स्थापना के साथ इन मंडियों को सीधे किसानों से उनकी उपज खरीदने की अनुमति दी गई है।
- इन विधायी परिवर्तनों के बावजूद इन राज्यों में निजी बाज़ारों की स्थापना के लिये निजी क्षेत्र से कोई महत्त्वपूर्ण निवेश देखने को नहीं मिला है।
- कृषि बाज़ारों में निजी क्षेत्र के निवेश में कमी का सबसे बड़ा कारण उत्पाद संग्रह और एकीकरण में उच्च लागत का होना है। इसके अतिरिक्त छोटे तथा सीमांत किसानों की अधिकता के कारण यह लागत और भी बढ़ जाती है।
- यही कारण है कि अधिकांश खुदरा शृंखलाएँ सीधे किसानों की बजाय मंडियों से ही बड़ी मात्रा में फल और सब्जियाँ खरीदना पसंद करती हैं।

उच्च मूल्य से जुड़े साक्ष्यों का अभाव:

- वर्तमान में देश के विभिन्न हिस्सों में सक्रिय निजी बाज़ारों से भी इस बात के कोई साक्ष्य नहीं मिले हैं कि इन बाज़ारों में किसानों को APMCs की तुलना में अधिक मूल्य प्राप्त हो रहा है।
  - बल्कि यदि लेन-देन की लागत मंडी करों से अधिक होती है, तो इस लागत को किसानों को कम कीमत पर हस्तांतरित किया जाएगा।
  - अर्थात् इसके कारण किसानों पर दबाव और अधिक बढ़ जाएगा।
  - इसके अलावा यदि APMC प्रणाली कमज़ोर होती है और निजी बाज़ार पर्याप्त रूप से उनका स्थान नहीं लेते तो उस स्थिति में इस क्षेत्र में एक बड़ी रिक्तता की स्थिति बन सकती है और ऐसी आशंका भी बनी हुई है कि इसका स्थान गैर-विनियमित व्यापारियों द्वारा ले लिया जाएगा, जिससे किसानों की चुनौतियाँ और अधिक बढ़ सकती हैं।

आगे की राह:

- मंडी अवसंरचना में मात्रात्मक सुधार: भारत के वर्तमान कृषि विपणन परिदृश्य को देखते हुए देश के सभी हिस्सों में मंडियों के घनत्व में वृद्धि के साथ, मंडी बुनियादी ढाँचे में निवेश बढ़ाने और न्यूनतम समर्थन प्रणाली को ज़्यादा क्षेत्रों और फसलों तक विस्तृत करने पर विशेष ध्यान देना होगा।
  - इस दिशा में अपेक्षित सुधार लाने के लिये मंडी कर के रूप में प्राप्त राजस्व का प्रयोग व्यवस्थित रूप से पुन: APMCs में निवेश के लिये किया जाना चाहिये ताकि कृषि बाज़ार अवसंरचना को मज़बूत बनाया जा सके।
  - इस संदर्भ में पंजाब मंडी बोर्ड का उदाहरण अनुकरण योग्य है, जहाँ इस राजस्व का उपयोग ग्रामीण सड़कों के निर्माण, चिकित्सा और पशु चिकित्सा औषधालय चलाने, पीने के पानी की आपूर्ति, स्वच्छता में सुधार, ग्रामीण विद्युतीकरण के विस्तार और आपदाओं के दौरान किसानों को राहत प्रदान करने के लिये किया जाता है।
- **मंडी अवसंरचना में गुणात्मक सुधार:** वर्तमान में न केवल मंडियों की संख्या में वृद्धि किये जाने की आवश्यकता है बल्कि बेहतर मंडियों की भी आवश्यकता है।
  - APMCs में बड़े आंतरिक सुधारों की आवश्यकता है जिससे नए निवेशकों या व्यवसाइयों के प्रवेश को आसान बनाने के साथ व्यापारियों की मिलीभगत को कम किया जा सके और मंडियों को राष्ट्रीय ई-ट्रेडिंग प्लेटफॉर्म के साथ जोड़ा जा सके।

नोट :

- व्यापारियों हेतु एकीकृत राष्ट्रीय लाइसेंस की शुरुआत और बाज़ार शुल्क के लिये सिंगल पॉइंट लेवी भी मंडियों के गुणात्मक सुधार की दिशा में सकारात्मक कदम होगा।

- **आकारिक मितव्ययिता में सुधार:** निगमों के साथ किसानों की मोलभाव करने की शक्ति को तभी बदला जा सकता है जब कृषि क्षेत्र की आकारिक मितव्ययिता में पर्याप्त वृद्धि की जाए, अर्थात् किसी को आर्थिक दृष्टि से व्यावहारिक बनाते हुए कृषि अवसंरचना तंत्र को और अधिक व्यापक किया जाए।
- इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये किसान उत्पादक संगठनों (Farmer Producer Organization-FPO) को मज़बूत किया जाना बहुत ही आवश्यक है।

निष्कर्ष:

भारतीय कृषि विपणन सुधारों के लिये भारत के कृषि बाज़ारों की शोधार्थी 'बारबरा हैरिस-व्हाइट' से प्रेरणा ली जानी चाहिये। इनके अनुसार, ' विनियमित त्रुटिपूर्ण बाज़ारों की तुलना में गैर-विनियमित त्रुटिपूर्ण बाज़ारों की समस्याओं में वृद्धि की संभावनाएँ अधिक होती हैं।

डिजिटल रुपया: आवश्यकता और महत्त्व

संदर्भ

बीते एक दशक में एथरियम और बिटकॉइन जैसी डिजिटल मुद्राओं या क्रिप्टोकरेंसी की बढ़ती लोकप्रियता ने विश्व भर के अधिकांश केंद्रीय बैंकों को उनके द्वारा नियंत्रित डिजिटल मुद्रा लॉन्च करने पर गंभीरता से विचार करने के लिये मजबूर कर दिया है, जो कि कैशलेस सोसाइटी के लक्ष्य को बढ़ावा देने के साथ-साथ अर्थव्यवस्था में डिजिटल मुद्रा की कमियों को दूर करने की दिशा में भी महत्त्वपूर्ण साबित होगी।

इस संदर्भ में यूरोपीय केंद्रीय बैंक (ECB) ने यूरोपीय संघ के लिये 'सेंट्रल बैंक डिजिटल करेंसी' (CBDC) यानी केंद्र बैंक द्वारा जारी डिजिटल मुद्रा के मूल्यांकन का इरादा व्यक्त किया है। ज्ञात हो कि वर्ष 2018 में भारतीय रिज़र्व बैंक (RBI) ने वित्तीय संस्थाओं को किसी भी प्रकार की क्रिप्टोकरेंसी से जुड़े लेन-देनों को सुविधा न प्रदान करने का निर्देश दिया था।

हालाँकि बीते दिनों रिज़र्व बैंक ने संकेत दिया था कि वह सरकार समर्थित डिजिटल मुद्रा (क्रिप्टोकरेंसी) विकसित करने की व्यवहार्यता का अध्ययन कर रहा है। विश्व भर में आज ऐसे तमाम देश हैं, जो सरकार द्वारा समर्थित डिजिटल मुद्रा की संभावना की तलाश कर रहे हैं, जिसमें चीन और अमेरिका जैसे बड़े देश भी शामिल हैं, ऐसे में भारत को डिजिटल मुद्रा विकसित करने हेतु प्रतिस्पर्द्धा में पीछे नहीं रहना चाहिये और जल्द-से-जल्द इस प्रकार की संभावनाओं की तलाश करनी चाहिये।

मुद्रा के डिजिटलीकरण और डिजिटल मुद्रा में अंतर

- डिजिटल रुपए के महत्त्व को समझने से पूर्व हमें सर्वप्रथम मुद्रा के डिजिटलीकरण और डिजिटल मुद्रा में अंतर को समझना होगा।
- मौजूदा वास्तविक मुद्रा के डिजिटलीकरण की शुरुआत इलेक्ट्रॉनिक पेमेंट और इंटरबैंक पेमेंट सिस्टम के आगमन के साथ हुई थी। इसकी सहायता से वाणिज्यिक बैंक अधिक कुशल और स्वतंत्र तरीके से ऋण के प्रवाह को बढ़ावा दे सकते हैं, जिससे अर्थव्यवस्था में मुद्रा की आपूर्ति में बढ़ोतरी होती है, हालाँकि इससे देश की बुनियादी मुद्रा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।
- इसके विपरीत ब्लॉकचेन प्रौद्योगिकी द्वारा समर्थित डिजिटल मुद्रा देश की बुनियादी मुद्रा को प्रभावित करती है, जिससे देश के केंद्रीय बैंक को मुद्रा सृजन और आपूर्ति के लिये मौजूदा बैंकिंग प्रणाली पर निर्भर नहीं रहना पड़ेगा, बल्कि वह स्वयं डिजिटल करेंसी का सृजन कर इसे सीधे उपभोक्ता तक पहुँचा सकेगा।

सरकार द्वारा नियंत्रित डिजिटल मुद्रा की आवश्यकता

- अवैध गतिविधियों पर रोक: एक संप्रभु डिजिटल मुद्रा की आवश्यकता मौजूदा क्रिप्टोकरेंसी (एथरियम और बिटकॉइन आदि) के अराजक डिज़ाइन के कारण उत्पन्न होती है, जिसमें डिजिटल मुद्रा के सृजन और रखरखाव की शक्तियाँ प्रयोगकर्त्ताओं अथवा उपभोक्ताओं के पास होती हैं।
  - बिना किसी सरकारी निगरानी और सीमा पार भुगतान में आसानी के कारण इस प्रकार की डिजिटल मुद्रा का उपयोग प्राय: चोरी, आतंकी फंडिंग, मनी लॉन्ड्रिंग आदि के लिये काफी आसानी से किया जा सकता है।

नोट :

- डिजिटल मुद्रा को नियंत्रित करके केंद्रीय बैंक इस प्रकार की घटनाओं पर लगाम लगा सकता है।

- **अस्थिरता:** चूँकि क्रिप्टोकरेंसी या डिजिटल मुद्रा किसी भी संपत्ति अथवा मुद्रा द्वारा समर्थित नहीं होती है और इसका मूल्य केवल मांग और आपूर्ति के आधार पर निर्धारित किया जाता है, इसलिये बिटकॉइन जैसे अन्य क्रिप्टोकरेंसीज़ के मूल्य में काफी अस्थिरता देखने को मिलती है।
  - केंद्रीय बैंक द्वारा जारी डिजिटल मुद्रा को किसी संपत्ति अथवा पारंपरिक मुद्रा का समर्थन प्राप्त होगा, जिसके कारण इसका मूल्य अन्य डिजिटल मुद्राओं जैसे एथरियम और बिटकॉइन की तरह अस्थिर नहीं होगा।
- रणनीतिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण: अंतर्राष्ट्रीय निपटान बैंक (BIS) द्वारा किये गए एक सर्वेक्षण के मुताबिक, इसमें शामिल होने वाले तकरीबन 80 प्रतिशत केंद्रीय बैंकों ने यह स्वीकार किया कि वे किसी-न-किसी रूप में 'सेंट्रल बैंक डिजिटल करेंसी' (CBDC) पर कार्य कर रहे हैं।
  - इसके अलावा चीन भी अपनी डिजिटल रेनमिनबी (चीन की मुद्रा) को लॉन्च करके मुद्रा और भुगतान प्रणाली में क्रांतिकारी बदलाव लाने की दिशा में कार्य कर रहा है।
  - ऐसे में भारत के लिये डिजिटल करेंसी को लॉन्च करना न केवल वित्तीय प्रणाली में बदलाव लाने की दिशा में महत्त्वपूर्ण है, बल्कि यह रणनीतिक दृष्टि से भी काफी आवश्यक है।
- **डिजिटल मुद्रा छद्म युद्ध:** चीन अपनी डिजिटल मुद्रा को बढ़ावा देकर एक नए और उन्नत वैश्विक वित्तीय सिस्टम की स्थापना का प्रयास कर रहा है, वहीं अमेरिका भी इसी दिशा में प्रयास कर रहा है। उदाहरण के लिये बीते दिनों अमेरिका की दिग्गज सोशल मीडिया कंपनी फेसबुक ने लिब्रा (Libra) नामक क्रिप्टोकरेंसी लॉन्च करने की घोषणा की थी, जिससे चीन की डिजिटल मुद्रा से मुकाबले के लिये अमेरिका की डिजिटल मुद्रा के रूप में प्रस्तुत किया गया था।
  - ऐसे में भारत एक छद्म डिजिटल मुद्रा युद्ध के मुहाने पर खड़ा है, क्योंकि अमेरिका और चीन नए युग के वित्तीय उत्पादों (डिजिटल मुद्रा) के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अपना वर्चस्व कायम करने के लिये संघर्षरत हैं।
  - इस तरह डिजिटल रुपया न केवल वित्तीय नवाचार की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है, बल्कि अमेरिका और चीन के बीच इस छद्म युद्ध में भारत की स्थिति को और अधिक मज़बूत करने के लिये भी काफी महत्त्वपूर्ण है।
- **डॉलर पर निर्भरता को कम करना:** यह भारत को अपने सामरिक साझेदारों के साथ व्यापार हेतु लेन-देन की मुद्रा के रूप में डिजिटल रुपया के प्रभुत्त्व को स्थापित करने का अवसर प्रदान करता है, जिससे डॉलर पर भारत की निर्भरता स्वत: ही कम हो जाएगी।

डिजिटल छद्म युद्ध (Digital Proxy War)

- अमेरिकी डॉलर को लंबे समय से विश्व व्यापार की प्रमुख मुद्रा माना जाता रहा है और अब तक वैश्विक अर्थव्यवस्था में अमेरिकी डॉलर के वर्चस्व को चुनौती नहीं मिली है, जिसके कारण अमेरिका को वैश्विक वित्तीय प्रणाली में काफी लाभ प्राप्त होता है तथा वह इसका उपयोग अपने प्रतिद्वंद्वियों पर प्रतिबंध लगाने हेतु भी करता है।
- हालाँकि अमेरिका और चीन के बीच हुए व्यापार युद्ध के कारण अब चीन डिजिटल रेनमिनबी का उपयोग करके अधिक उन्नत वित्तीय प्रणाली के निर्माण पर ज़ोर दे रहा है।

डिजिटल रुपए का महत्त्व

- मौद्रिक नीति का तत्काल प्रभाव: डिजिटल रुपया रिज़र्व बैंक को मौद्रिक नीति को नियंत्रित करने हेतु प्रत्यक्ष उपकरण प्रदान कर और अधिक सशक्त बनाएगा।
  - डिजिटल रुपए के उपयोग से रिज़र्व बैंक को प्रत्यक्ष रुप से मुद्रा सृजन और आपूर्ति की शक्ति प्रदान होगी, जिससे नीतिगत बदलावों के प्रभावों को तत्काल प्रतिबिंबित किया जा सकेगा, जबकि अब तक रिज़र्व बैंक अपने नीतिगत निर्णयों को लागू करने के लिये वाणिज्यिक बैंकों पर निर्भर है।
- **जमाकर्त्ताओं के हितों की रक्षा: गैर-बैंकिंग वित्तीय संस्थाओं** के मौजूदा संकट, **PMC बैंक घोटाला** और भारतीय वित्तीय प्रणाली की मौजूदा स्थिति हमारे मौजूदा बैंकिंग मॉडल की नाजुकता का प्रमाण है।

नोट :

- देश की सरकार अथवा केंद्रीय बैंक द्वारा समर्थित डिजिटल रुपया, भारतीय नियामकों को अर्थव्यवस्था में लेन-देन और ऋण प्रवाह की निगरानी में मदद करेगा, जिससे घोटालों और धोखाधड़ी की निगरानी करने में सहायता मिलेगी और जमाकर्त्ताओं के पैसे को भी सुरक्षा प्रदान की जा सकेगी।
- इसके अलावा यह निवेशकों को मौजूदा अत्यधिक जोखिम वाली डिजिटल मुद्रा की तुलना में एक अधिक स्थिर और सुरक्षित विकल्प प्रदान करेगा।

- **बैंकिंग प्रणाली के लिये नया आयाम:** डिजिटल रुपया बैंकों की अनुमति अथवा उनके साथ साझेदारी किये बिना भारत की लगभग सभी बड़ी प्रोद्योगिकी कंपनियों को फिनटेक (Fintech) कंपनी के रूप में परिवर्तित कर देगा। तकनीकी कंपनियों के लिये उन ग्राहकों को लुभाना आसान होगा, जिनकी पहुँच बैंकिंग सिस्टम तक नहीं है।
- **कैशलेस सोसाइटी के लिये महत्त्वपूर्ण:** सरकार द्वारा समर्थित आधिकारिक डिजिटल मुद्रा आम उपयोगकर्त्ताओं और उपभोक्ताओं को नकदी का उपयोग न करने के प्रति प्रोत्साहित करने में महत्त्वपूर्ण हो सकती है, जो कि कर चोरी पर नियंत्रण हेतु काफी उपयोगी होगा।
  - डिजिटल रुपया स्मार्ट कॉन्ट्रैक्ट की मदद से कैशबैक, पैसे भेजने, ऋण देने, बीमा, शेयर खरीदने और दूसरे वित्तीय लेन-देनों को आसान बना देगा।

निष्कर्ष

भारतीय रिज़र्व बैंक अथवा भारत सरकार द्वारा समर्थित डिजिटल रुपया, भारतीय नागरिकों को सशक्त बनाने और उन्हें तेज़ी से बढ़ती वैश्विक डिजिटल अर्थव्यवस्था में अपना स्थान तलाशने में मदद करेगा। साथ ही इससे भारतीय नागरिकों को देश की पुरानी बैंकिंग प्रणाली से भी मुक्ति मिलेगी और भारत के बैंकिंग मॉडल में एक नया आयाम जुड़ सकेगा। अर्थव्यवस्था में तरलता, बैंकिंग प्रणाली और वित्तीय बाज़ार आदि पर डिजिटल रुपए के प्रभाव को देखते हुए यह आवश्यक है कि भारत के नीति निर्माताओं द्वारा भारत में सरकार समर्थित डिजिटल मुद्रा की संभावनाओं पर गंभीरता से विचार किया जाए। चूँकि आने वाले समय में चीन और अमेरिका के बीच छद्म डिजिटल मुद्रा युद्ध देखने को मिल सकता है, इसलिये यदि ऐसे में भारत भी अपनी डिजिटल मुद्रा लॉन्च करता है तो उसे अंतर्राष्ट्रीय तनाव का सामना करना पड़ सकता है, और भारत को इसके लिये पहले से ही तैयार रहना चाहिये।

औद्योगिक समूहों को बैंक स्वामित्व की अनुमति

हाल ही में भारतीय रिज़र्व बैंक (Reserve Bank of India-RBI) की आतंरिक कार्य समिति (Internal Working Group- IWG) ने बड़े औद्योगिक समूहों को देश के बैंकिंग क्षेत्र में प्रत्यक्ष भागीदारी की अनुमति देने के लिये 'बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949' में आवश्यक संशोधन किये जाने का सुझाव दिया है। बैंकिंग क्षेत्र को औद्योगिक समूहों के लिये खोले जाने की यह सिफारिश 'गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों' (NBFC) के साथ अन्य आकांक्षियों को अतिरिक्त बैंकिंग लाइसेंस देने की नीति के अनुरूप है। हालाँकि औद्योगिक समूहों के पास बैंकों का स्वामित्व होना हमेशा से ही एक विवादास्पद मुद्दा रहा है। विश्व के कई देशों ने बैंकों और अन्य व्यावसायिक/औद्योगिक समूहों के बीच एक मज़बूत दीवार बनाए रखने के विकल्प को चुना है।

ऐसे में औद्योगिक समूहों को बैंकों का प्रायोजक बनने या बैंकों का स्वामित्व प्राप्त करने की अनुमति देने से पहले इसके लाभ और नुक्सान की व्यापक समीक्षा करना बहुत ही आवश्यक है।

औद्योगिक समूहों को बैंकिंग लाइसेंस देने के लाभ:

- **पूंजी निवेश में वृद्धि:** भारत के अधिकांश बैंकों में बड़ी मात्रा में पूंजी निवेश किये जाने की आवश्यकता है और वर्तमान में सरकार द्वारा सार्वजनिक बैंकों का पूंजीकरण करदाताओं से प्राप्त धन से किया जाता है।
  - ऐसे में बड़े औद्योगिक समूहों को बैंकिंग क्षेत्र में प्रवेश की अनुमति देकर इस क्षेत्र में पूंजी की कमी को दूर करने में सहायता प्राप्त हो सकती है।
- **वित्तीय समायोजन:** देश की स्वतंत्रता के लगभग 7 दशकों के पश्चात् सरकार की कई योजनाओं के बावज़ूद देश की एक बड़ी आबादी अभी भी बैंकिंग सेवाओं तक पहुँच से बाहर है। बैंकिंग क्षेत्र में कोर्पोरेट्स के प्रवेश से इसके पूंजी निवेश में वृद्धि के साथ-साथ सेवा क्षेत्र का भी विस्तार होगा। बैंकों की नई शाखाओं के खुलने से अधिक-से-अधिक लोगों को बैंकिंग सेवाओं से जोड़ा जा सकेगा।

नोट :

- **प्रतिस्पर्द्धा में सुधार:** बैंकों का निजीकरण भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में लंबे समय से प्रस्तावित सुधार रहा है। बैंकिंग क्षेत्र में कॉर्पोरेट्स के प्रवेश की अनुमति से सार्वजनिक बैंकों पर अपनी कार्यप्रणाली में सुधार करने और अधिक प्रतिस्पर्द्धी बनने के लिये दबाव बढ़ेगा।

औद्योगिक समूहों को बैंकिंग लाइसेंस देने के नुकसान:

औद्योगिक समूहों को बैंकों का स्वामित्व प्राप्त करने की अनुमति न देने के प्रमुख कारणों में से कुछ निम्नलिखित हैं:

- पारदर्शिता की कमी और नैतिक जोखिम: एक ऐसा बैंक जिसका औद्योगिक समूहों से कोई संबंध न हो, वह बिना हितों के टकराव के प्रभावी रूप से ऋण आवेदनों की समीक्षा कर सकता है और इस प्रकार अर्थव्यवस्था के समग्र विकास में तेज़ी लाने के लिये धन का कुशल आवंटन सुनिश्चित किया जा सकता है।
  - दूसरी ओर औद्योगिक समूहों के स्वामित्व वाले बैंकों पर ऋण जारी करने के दौरान अधिक योग्य संस्थानों/कंपनियों की बजाय लगातार समूह की ही अन्य कंपनियों को प्राथमिकता देने का दबाव बना रहेगा। इसे 'कनेक्टेड लेंडिंग' (Connecting Lending) के रूप में देखा जा सकता है।
  - कनेक्टेड लेंडिंग, परियोजनाओं के जोखिम को औद्योगिक समूहों से प्रभावी रूप से हटाकर बैंकों को स्थानांतरित कर सकती है। इसके कारण होने वाली क्षति की भरपाई बैंक के अन्य शेयरधारकों या करदाताओं (बैंक के असफल होने की स्थिति में) को करनी पड़ सकती है।
  - आर्थिक दृष्टि से यह कुशल निधि के उपयोग को रोक सकता है और लाभ की संभावनाओं तथा शोधन क्षमता को प्रभावित कर सकता है।
  - नैतिक दृष्टि से देखा जाए तो यह एक प्रभावी वित्तीय मध्यस्थ के रूप में बैंक की भूमिका को प्रभावित करेगा और नैतिक खतरा या हितों के टकराव की स्थिति पैदा करेगा।

सर्कुलर लेंडिंग और विनियमन की चुनौतियाँ:

- औद्योगिक समूहों को बैंकों के स्वामित्व की अनुमति देने का एक और जोखिम 'सर्कुलर लेंडिंग' (Circular Lending) से जुड़ा है।
- यहाँ सर्कुलर लेंडिंग से आशय उस स्थिति से हैं जहाँ कोई कॉर्पोरेट बैंक 'X' किसी ऐसे औद्योगिक समूह की परियोजना की फंडिंग कर रहा है जिसके पास कॉर्पोरेट बैंक 'Y' का स्वामित्व है, इसके साथ ही कॉर्पोरेट बैंक 'Y' किसी ऐसे औद्योगिक समूह की परियोजना की फंडिंग कर रहा है जिसके पास कॉर्पोरेट बैंक 'Z' का स्वामित्व है और अंत में कॉर्पोरेट बैंक 'Z' किसी ऐसे औद्योगिक समूह की परियोजना की फंडिंग कर रहा है जिसके पास कॉर्पोरेट बैंक 'X' का स्वामित्व है।
- ऐसी स्थिति में उपलब्ध कानूनी प्रावधानों और शेल कंपनियों के प्रसार के बीच वास्तविक समय में ऐसे ऋणों की निगरानी का कार्य बहुत ही कठिन होगा।

असमानता और धन का संकेंद्रण:

- औद्योगिक समूहों को बैंकों का स्वामित्व प्राप्त होने से बड़े औद्योगिक समूहों की शक्ति में और वृद्धि होगी, जिनका पहले से ही अर्थव्यवस्था के कई महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों (जैसे- दूरसंचार, संगठित खुदरा व्यापार, विमानन, सॉफ्टवेयर और ई-कॉमर्स आदि) में वर्चस्व रहा है।
  - बड़े औद्योगिक समूहों का बैंकिंग तंत्र (जो आर्थिक क्षेत्र का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है) में प्रत्यक्ष हस्तक्षेप न सिर्फ छोटे व्यसायों/उद्योगों के हितों को प्रभावित करेगा बल्कि यह अन्य नए बाज़ारों में बड़े औद्योगिक समूहों को अपनी शक्ति का लाभ उठाने में सहायता करेगा।
  - इसके अतिरिक्त औद्योगिक समूहों को बैंकों के स्वामित्व की अनुमति देने से धन के संकेंद्रण और असमानता को बढ़ावा मिलेगा।
  - इससे आर्थिक क्षेत्र में नई बड़ी शक्तियों का उदय हो सकता है, जो शीघ्र ही अर्थव्यवस्था को सही दिशा में ले जाने की सरकार की क्षमता को समाप्त कर देंगे।

पूर्व के नियमों के विपरीत:

- पिछले कुछ वर्षों में भारतीय बैंकिंग क्षेत्र को कई प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ा है, जिसे देखते हुए वर्ष 2016 में RBI द्वारा किसी एक ही कंपनी को ऋण देने की सीमा निर्धारित करने के लिये नए दिशा-निर्देश जारी किये गए थे।

नोट :

- इस निर्णय के पीछे तर्क यह था कि यदि कोई बैंक एक ही कंपनी को बहुत अधिक ऋण देता है तो संबंधित कंपनी के असफल होने पर बैंक के आर्थिक जोखिम की संभावनाएँ बढ़ जाती हैं।
- ऐसे में बैंकिंग क्षेत्र में बड़े औद्योगिक समूहों के प्रवेश की अनुमति की सिफारिश वर्ष 2016 के उपरोक्त निर्णय के विपरीत होगी।

निष्कर्ष:

औद्योगिक और बैंकिंग क्षेत्र को मिलाने के लाभ तथा नुकसान के अध्ययनों से इस कदम के विकास, सार्वजनिक वित्त एवं भारतीय अर्थव्यवस्था के भविष्य के लिये अनुकूल न होने का संकेत मिलता है। ऐसे में कॉर्पोरेट्स के हाथों में बहुत अधिक आर्थिक शक्ति देने की बजाय काफी समय से लंबित बैंकिंग सुधारों को लागू करने के साथ ही RBI की कार्यात्मक स्वायत्तता को मज़बूत करने के प्रयासों पर ध्यान दिया जाना चाहिये।

फिनटेक: चुनौतियाँ और संभावनाएँ

संदर्भ:

हाल ही में चीन को पीछे छोड़ते हुए भारत एशिया में फिनटेक (FinTech) के सबसे बड़े बाज़ार के रूप में उभरा है। विश्व के दूसरे सबसे बड़े फिनटेक हब (अमेरिका के बाद) के रूप में उभरने के बाद भारत में 'फिनटेक बूम' अर्थात् फिनटेक का तीव्र और व्यापक विकास देखा गया है। वर्तमान समय में फिनटेक अर्थव्यवस्था के सबसे अधिक संपन्न क्षेत्रों (व्यापार वृद्धि और रोज़गार सृजन दोनों मामलों में) में से एक है। फिनटेक वित्तीय प्रणाली में पारदर्शिता लाने के साथ वित्तीय समायोजन के लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायक हो सकता है।

क्या है फिनटेक (FinTech):

- फिनटेक (FinTech), 'फाइनेंशियल टेक्नोलॉजी' (Financial Technology) का संक्षिप्त रूप है। वित्तीय कार्यों में प्रौद्योगिकी के उपयोग को फिनटेक कहा जा सकता है।
- दूसरे शब्दों में यह पारंपरिक वित्तीय सेवाओं और विभिन्न कंपनियों तथा व्यापार में वित्तीय पहलुओं के प्रबंधन में आधुनिक तकनीक का कार्यान्वयन है। फिनटेक शब्द का प्रयोग उन नई तकनीकों के संदर्भ में किया जाता है, जिनके माध्यम से वित्तीय सेवाओं का प्रयोग, इसमें सुधार और स्वायत्तता लाने का प्रयास किया जाता है।
- डिजिटल पेमेंट, डिजिटल ऋण, बैंक टेक, इंश्योर टेक, रेगटेक (RegTech) क्रिप्टोकरेंसी (Cryptocurrency) आदि फिनटेक के कुछ प्रमुख घटक हैं।
- हालाँकि वर्तमान में फिनटेक के तहत कई अलग-अलग क्षेत्र और उद्योग जैसे-शिक्षा, खुदरा बैंकिंग, निधि जुटाना और गैर-लाभकारी कार्य, निवेश प्रबंधन आदि भी शामिल किये जाते हैं।

फिनटेक नवोन्मेष के सक्रिय क्षेत्र:

- क्रिप्टोकरेंसी और डिजिटल कैश।
- **ब्लॉकचेन तकनीक:** इसके तहत किसी केंद्रीय बहीखाते की बजाय कंप्यूटर नेटवर्क पर लेन-देन के रिकॉर्ड को सुरक्षित रखा जाता है।
- स्मार्ट कॉन्ट्रैक्ट, इसके तहत कंप्यूटर प्रोग्राम के माध्यम से (अक्सर ब्लॉकचेन का उपयोग करते हुए) खरीदारों और विक्रेताओं के बीच अनुबंधों को स्वचालित रूप से निष्पादित किया जाता है।
- **ओपन बैंकिंग:** ओपन बैंकिंग एक ऐसी प्रणाली है जिसके तहत बैंक नए एप्लीकेशन और सेवाओं को विकसित करने हेतु तीसरे पक्ष को अपने 'एप्लीकेशन प्रोग्रामिंग इंटरफेस' (API) की सुविधा प्रदान करते हैं।
  - ओपन बैंकिंग के तहत कार्यरत बैंकों को फिनटेक के साथ प्रतिस्पर्द्धा की बजाय साझेदारी करने का अवसर प्रदान किया जाता है।
- **इंश्योर टेक:** इसके तहत प्रौद्योगिकी के उपयोग के माध्यम से बीमा उद्योग को सरल और कारगर बनाने का प्रयास किया जाता है।
- **रेगटेक:** रेग टेक, रेगुलेटरी टेक्नोलॉजी (Regulatory technology) का संक्षिप्त रूप है। इसका उपयोग व्यवसायों को कुशलतापूर्वक और किफायती तरीके से औद्योगिक क्षेत्र के नियमों का पालन करने में सहायता के लिये किया जाता है।

नोट :

- **साइबर सुरक्षा:** देश में साइबर हमलों के मामलों में वृद्धि और विकेंद्रीकृत डेटा के कारण फिनटेक तथा साइबर सुरक्षा के मुद्दे एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं।

भारत में फिनटेक के विकास के प्रमुख घटक:

- व्यापक पहचान औपचारीकरण (आधार के माध्यम से): 1.2 बिलियन नामांकन।
- जन धन योजना जैसे प्रयासों के माध्यम से बैंकिंग पहुँच में वृद्धि: 1 बिलियन से अधिक बैंक खाते।
- व्यापक स्मार्टफोन पहुँच: 1.2 बिलियन से अधिक स्मार्टफोन उपभोक्ता।
- भारत में व्यय योग्य आय में वृद्धि।
- भारत सरकार द्वारा यूपीआई (UPI) और डिजिटल इंडिया जैसे प्रमुख प्रयास।
- मध्यम वर्ग का व्यापक विस्तार: वर्ष 2030 तक भारत की मध्यम वर्गीय आबादी में 140 मिलियन नए परिवार और उच्च-आय वर्ग की आबादी में 21 मिलियन नए परिवार जुड़ जाएंगे, जो देश के फिनटेक बाज़ार में मांग और विकास को गति प्रदान करेंगे।

फिनटेक से जुड़ी संभावनाएँ:

- व्यापक वित्तीय समावेशन: वर्तमान में भी देश की एक बड़ी आबादी औपचारिक वित्तीय प्रणाली के दायरे से बाहर है।
- वित्तीय प्रौद्योगिकियों के प्रयोग के माध्यम से पारंपरिक वित्तीय और बैंकिंग मॉडल में वित्तीय समावेशन से जुड़ी चुनौतियों को दूर किया जा सकता है।
- MSMEs को वित्तीय सहायता प्रदान करना: वर्तमान में देश में सक्रिय 'सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यमों (MSME)' के अस्तित्व के लिये पूंजी का अभाव सबसे बड़ा खतरा बना हुआ है।
  - 'अंतर्राष्ट्रीय वित्त निगम' (IFC) की रिपोर्ट के अनुसार, MSME क्षेत्र के लिये आवश्यक और उपलब्ध पूंजी का अंतर लगभग 397.5 बिलियन अमेरिकी डॉलर आँका गया है।
  - ऐसे में MSME क्षेत्र में फिनटेक का महत्त्व बढ़ जाता है, जिसमें इस क्षेत्र में पूंजी की कमी को दूर करने की क्षमता भी है।
  - कई फिनटेक स्टार्टअप द्वारा आसान और त्वरित ऋण उपलब्ध कराए जाने पर MSMEs को कई बार बैंक जाने या इसकी जटिल कागज़ी प्रक्रिया से राहत मिल सकेगी।
- **ग्राहक अनुभव और पारदर्शिता में सुधार:** फिनटेक स्टार्टअप सहूलियत, पारदर्शिता, व्यक्तिगत , और व्यापक पहुँच तथा उपयोग में सुलभता जैसी महत्त्वपूर्ण सुविधाएँ प्रदान करते हैं, जो ग्राहकों को सशक्त बनाने में सहायता करते हैं।
  - फिनटेक उद्योग द्वारा जोखिमों के आकलन के लिये अद्वितीय और नवीन मॉडल का विकास किया जाएगा।
  - बिग डेटा, मशीन लर्निंग, ऋण जोखिम के निर्धारण हेतु वैकल्पिक डेटा का लाभ उठाकर और सीमित क्रेडिट इतिहास वाले ग्राहकों के लिये क्रेडिट स्कोर विकसित कर देश में वित्तीय सेवाओं की पहुँच में सुधार लाने में सहायता प्राप्त होगी।

चुनौतियाँ:

- **साइबर हमले:** प्रक्रियाओं का स्वचालन और डेटा का डिजिटलीकरण फिनटेक प्रणाली को हैकरों के हमलों के प्रति सुभेद्य बनाता है।
  - हाल ही में कई डेबिट कार्ड कंपनियों और बैंकों में हुए साइबर हैकिंग के हमले इस बात का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं कि हैकर्स कितनी आसानी से महत्त्वपूर्ण प्रणालियों तक पहुँच प्राप्त कर इनमें अपूरणीय क्षति का कारण बन सकते हैं।
- **डेटा गोपनीयता की समस्या:** उपभोक्ताओं के लिये साइबर हमलों के साथ-साथ महत्त्वपूर्ण व्यक्तिगत और वित्तीय डेटा का दुरुपयोग भी एक बड़ी चिंता का कारण है।
- **विनियमन में कठिनाई:** वर्तमान समय में तेज़ी से उभरते फिनटेक क्षेत्र (विशेष रूप से क्रिप्टोकरेंसी) का विनियमन भी एक बड़ी समस्या है।
  - वर्तमान में विश्व के अधिकांश देशों में फिनटेक के विनियमन हेतु कोई विशेष प्रावधान नहीं हैं, ऐसे में विनियमन के इस अभाव ने इस क्षेत्र में घोटाले और धोखाधड़ी की घटनाओं को बढ़ावा दिया है।
  - फिनटेक द्वारा दी जाने वाली सेवाओं की विविधता के कारण इस क्षेत्र की समस्याओं के लिये कोई एकल और व्यापक समाधान तैयार करना बहुत ही कठिन है।

नोट :

आगे की राह:

- **साइबर अपराधियों से सुरक्षा:** वर्तमान में भारत साइबर हमलों के विरुद्ध सुरक्षात्मक और आक्रामक दोनों क्षमताओं के लिये लगभग पूरी तरह आयात पर ही निर्भर करता है। देश में विभिन्न क्षेत्रों में प्रौद्योगिकी की स्वीकार्यता और इसकी पहुँच में व्यापक वृद्धि को देखते हुए भारत के लिये इस क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त करना बहुत ही आवश्यक है।
- उपभोक्ता जागरूकता: तकनीकी सुरक्षा उपायों की स्थापना के साथ फिनटेक के लाभ और साइबर हमले से बचाव के संदर्भ में जागरूकता फैलाने के लिये ग्राहकों को शिक्षित और प्रशिक्षित किये जाने से भी फिनटेक के लोकतांत्रिकरण में सहायता प्राप्त होगी।
- **डेटा सुरक्षा कानून:** RBI द्वारा इस क्षेत्र में तकनीकी के प्रभावों की समीक्षा के लिये फिनटेक सैंडबॉक्स की स्थापना का निर्णय लिया जाना इस दिशा में एक सकारात्मक कदम है।
  - हालाँकि देश में एक मज़बूत डेटा सुरक्षा ढाँचे की स्थापना करना बहुत ही आवश्यक है।
  - इस संदर्भ में 'व्यक्तिगत डेटा सुरक्षा विधेयक, 2019' को व्यापक विचार-विमर्श के बाद पारित किया जाना चाहिये।

निष्कर्ष:

वर्तमान समय की ज़रूरतों के अनुरूप फिनटेक भारतीय आर्थिक क्षेत्र में व्याप्त चुनौतियों के लिये उपयुक्त समाधान उपलब्ध कराते हैं। फिनटेक में बीमा, निवेश, प्रेषण (Remittance) जैसी अन्य वित्तीय सेवाओं में व्यापक बदलाव लाने की क्षमता है। हालाँकि इस क्षेत्र में विनियम के दौरान इस बात पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये कि ऐसा कोई भी प्रयास इसके विकास में सहायक होना चाहिये न कि बाधक।

नोट :

अंतर्राष्ट्रीय घटनाक्रम

शंघाई सहयोग संगठन और भारत

संदर्भ:

शंघाई सहयोग संगठन (Shanghai Cooperation Organisation-SCO) में शामिल होने के तीन वर्ष बाद हाल ही में भारत द्वारा पहली बार इस समूह के राष्ट्राध्यक्षों को बैठक की मेज़बानी की गई। वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से आयोजित इस बैठक का फोकस COVID-19 महामारी के कारण उत्पन्न सामाजिक-आर्थिक, स्वास्थ्य और खाद्य सुरक्षा से जुड़ी चुनौतियों से निपटने के लिये योजनाओं को विकसित करने पर था।

मात्र दो दशक से भी कम समय में SCO यूरेशियन क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्रीय संगठन के रूप में उभरा है। यह समूह यूरेशिया के लगभग 60% से अधिक क्षेत्रफल, वैश्विक आबादी के 40% से अधिक हिस्से और वैश्विक जीडीपी के लगभग एक-चौथाई हिस्से का प्रतिनिधित्व करता है।

यूरेशियन क्षेत्र और इसके परे भी SCO की भूमिका और महत्त्व को देखते हुए कहा जा सकता है कि इस संगठन में शामिल होने से भारत को दीर्घावधि में अधिक लाभ होने की संभावना है। अत: SCO भारत को वर्तमान चुनौतियों का सतर्कतापूर्वक सामना करते हुए अपने राष्ट्रीय हितों को पूरा करने का अवसर प्रदान करता है।

शंघाई सहयोग संगठन

(Shanghai Cooperation Organisation- SCO)

- शंघाई सहयोग संगठन (Shanghai Cooperation Organisation- SCO) जून 2001 में 'शंघाई फाइव' (Shanghai Five) के विस्तार के बाद अस्तित्त्व में आया था।
- गौरतलब है कि 'शंघाई फाइव' का गठन रूस, चीन, कज़ाखस्तान, किर्गिज़स्तान और ताजिकिस्तान ने साथ मिलकर वर्ष 1996 में किया था।
- वर्तमान में विश्व के 8 देश (कज़ाखस्तान, चीन, किर्गिज़स्तान, रूस, ताजिकिस्तान, उज़्बेकिस्तान, भारत और पाकिस्तान) SCO के सदस्य हैं।
- अफगानिस्तान, ईरान, बेलारूस और मंगोलिया SCO में पर्यवेक्षक (Observer) के रूप में शामिल हैं।
- इस संगठन के उद्देश्यों में क्षेत्रीय सुरक्षा, सीमावर्ती क्षेत्रों में तैनात सैनिकों की संख्या में कमी करना, और आतंकवाद की चुनौती पर काम करना आदि शामिल थे।

भारत के लिये अवसर:

- **क्षेत्रीय सुरक्षा:** यूरेशियन सुरक्षा समूह के एक अभिन्न अंग के रूप में SCO भारत को इस क्षेत्र में धार्मिक अतिवाद और आतंकवाद के कारण उत्पन्न होने वाले शक्तियों को बेअसर करने में सक्षम बनाएगा।
  - ग़ौरतलब है कि अफगानिस्तान से पश्चिमी देशों की सेनाओं की वापसी और इस क्षेत्र में खुरासान प्रांत की स्थापना के साथ इस्लामिक स्टेट (Islamic State-IS) की सक्रियता में हुई वृद्धि ने क्षेत्र की शांति और स्थिरता के लिये एक नई चुनौती खड़ी कर दी है।
- **क्षेत्रवाद की स्वीकार्यता:** SCO उन कुछ चुने हुए क्षेत्रीय संगठनों में से एक है, जिनमें भारत अभी भी शामिल है, गौरतलब है कि हाल के कुछ वर्षों में सार्क (SAARC), क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक भागीदारी (RCEP) और 'बीबीआईएन (BBIN) समझौता' जैसे समूहों में भारत की सक्रियता में गिरावट देखने को मिली है।
  - इससे भी ज़रूरी बात यह है कि वर्तमान में तीन सबसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों (ऊर्जा, व्यापार, परिवहन) में सहयोग बढ़ाने के साथ पारंपरिक और गैर-पारंपरिक सुरक्षा खतरों से निपटने के लिये SCO एक मज़बूत आधार प्रदान करता है।

नोट :

- **मध्य एशिया से संपर्क:** SCO भारत की 'कनेक्ट सेंट्रल एशिया नीति' (Connect Central Asia Policy) को आगे बढ़ाने के लिये एक महत्त्वपूर्ण मंच का कार्य कर सकता है।
  - SCO के साथ भारत की वर्तमान साझेदारी को इस क्षेत्र के साथ अपने संबंधों को पुन: स्थापित और सक्रिय करने के प्रयास के रूप में देखा जा सकता है, गौरतलब है कि मध्य एशिया के साथ भारत के सभ्यतागत संबंध रहे हैं और इसे देश का विस्तारित पड़ोस भी माना जाता है।
  - SCO भारत को मध्य एशियाई देशों के साथ व्यापार और रणनीतिक संबंधों को मज़बूत करने के लिये एक सुविधाजनक चैनल प्रदान करता है।
- गौरतलब है कि मध्य एशिया के साथ आर्थिक संपर्क बढ़ाने की भारतीय नीति की नींव वर्ष 2012 की 'कनेक्ट सेंट्रल एशिया पॉलिसी' (Connect Central Asia Policy) पर आधारित है, जिसमें 4 'C' - वाणिज्य (Commerce), संपर्क (Connectivity), कांसुलर (Consular) और समुदाय (Community) पर ध्यान केंद्रित किया गया है।
- **पाकिस्तान और चीन से निपटना:** SCO भारत को एक ऐसा मंच प्रदान करता है, जहाँ वह क्षेत्रीय मुद्दों पर चीन और पाकिस्तान के साथ रचनात्मक चर्चा में शामिल हो सकता है और अपने सुरक्षा हितों को उनके समक्ष रख सकता है।
  - हालाँकि सरकार ने पिछले पाँच वर्षों में पाकिस्तान के साथ बैठकों से परहेज किया है, परंतु इस दौरान सरकार ने पाकिस्तान और चीन के साथ चर्चाओं के लिये SCO का उपयोग किया है, यहाँ तक कि हाल में भारत और चीन की सेनाओं के बीच लद्दाख गतिरोध के दौरान भी।
- **अफगानिस्तान की स्थिरता के लिये:** SCO अफगानिस्तान में तेज़ी से बदल रही स्थितियों और इस क्षेत्र में धार्मिक अतिवाद और आतंकवाद से उत्पन्न होने वाली शक्तियों (जिनसे भारत की सुरक्षा और विकास को खतरा हो सकता है) से निपटने के लिये एक वैकल्पिक क्षेत्रीय मंच के रूप में कार्य कर सकता है।
- **रणनीतिक संतुलन:** इन सबसे परे SCO में बने रहने को इसलिये भी महत्त्वपूर्ण माना जा रहा है, क्योंकि यह पश्चिमी देशों के साथ भारत के मज़बूत होते संबंधों के बीच वैश्विक राजनीति में भू-राजनीतिक संतुलन को बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

चुनौतियाँ:

- **प्रत्यक्ष स्थलीय संपर्क की बाधाएँ:** पाकिस्तान द्वारा भारत और अफगानिस्तान (तथा इसके आगे भी) के बीच भू-संपर्क की अनुमति न देना, भारत के लिये यूरेशिया के साथ अपने विस्तारित संबंधों को मज़बूत करने में सबसे बड़ी बाधा रहा है।
  - इसी कारण वर्ष 2017 में मध्य एशिया के साथ भारत का व्यापार मात्र 2 बिलियन अमेरिकी डॉलर (लगभग) का रहा, जबकि इसी दौरान रूस के साथ भारत का व्यापार लगभग 10 बिलियन अमेरिकी डॉलर का था।
  - इसके विपरीत वर्ष 2018 में रूस के साथ चीन का व्यापार 100 बिलियन अमेरिकी डॉलर से अधिक और मध्य एशिया के साथ 50 बिलियन अमेरिकी डॉलर से अधिक था।
  - मज़बूत संपर्क के अभाव ने इस हाइड्रोकार्बन-समृद्ध क्षेत्र और भारत के बीच ऊर्जा संबंधों के विकास में भी बाधा उत्पन्न की है।
- **रूस और चीन के बीच मज़बूत होता संपर्क:** रूस द्वारा भारत को SCO में शामिल होने के लिये प्रोत्साहित करने के पीछे एक बड़ा कारण चीन की बढ़ती शक्ति को संतुलित करना था।
  - हालाँकि वर्तमान में जब भारत ने अमेरिका के साथ अपने संबंधों को मज़बूत करने पर विशेष ध्यान दिया है, तो इसी दौरान रूस और चीन की बढ़ती निकटता भारत के लिये एक नई चुनौती बनकर उभर रही थी।
  - इसके अतिरिक्त रूस-चीन-पाकिस्तान त्रिकोणीय हितों के अभिसरण से क्षेत्र में उभरता नया समीकरण भी एक बड़ी चुनौती बन सकता है, जिसे दूर करना बहुत ही आवश्यक है।
- **बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव परियोजना पर मतभेद:** भारत ने **'बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव परियोजना'** (Belt and Road initiative-BRI) को लेकर प्रत्यक्ष रूप से अपना विरोध स्पष्ट कर दिया है परंतु SCO के अन्य सदस्यों ने चीन की इस महत्त्वाकांक्षी परियोजना का समर्थन किया है।
- **भारत-पाकिस्तान प्रतिद्वंद्विता:** SCO सदस्यों ने पूर्व में इस संगठन को भारत-पाकिस्तान के प्रतिकूल संबंधों का बंधक बनाए जाने की आशंका व्यक्त की थी, परंतु हाल के दिनों की स्थितियों को देखते हुए उनका भय और भी बढ़ गया होगा।

नोट :

आगे की राह:

- **मध्य एशिया के साथ संपर्क सुधार:** भारत मध्य एशिया में अपनी पहुँच को मज़बूत करने के लिये इस क्षेत्र में चीन के बढ़ते प्रभुत्व से जुड़ी रूस की चिंताओं को भुना सकता है, इसके अतिरिक्त मध्य एशियाई देश भी इस क्षेत्र में भारत द्वारा एक बड़ी भूमिका निभाए जाने को लेकर उत्सुक हैं।
  - हालाँकि इसके लिये भारत को पहले अपनी पकड़ को मज़बूत करने पर विशेष ज़ोर देना होगा।
  - इस संदर्भ में यूरेशिया में एक मज़बूत पहुँच स्थापित करने के लिये चाबहार बंदरगाह के खुलने और अश्गाबात समझौते में भारत के शामिल होने का लाभ उठाया जाना चाहिये। इसके अलावा 'अंतर्राष्ट्रीय उत्तर-दक्षिण परिवहन गलियारे' (INSTC) के संचालन पर भी विशेष ध्यान देना होगा।
- **चीन के साथ संबंधों में सुधार:** 21वीं सदी की वैश्विक राजनीति में एशियाई नेतृत्व को मज़बूती प्रदान करने के लिये यह बहुत ही आवश्यक है कि भारत और चीन द्वारा आपसी मतभेदों को शांति के साथ दूर करने के लिये एक व्यवस्थित प्रणाली को विकसित किया जाए।
  - इस भावना को वर्ष 2018 के शांगरी ला डायलॉग में प्रधानमंत्री मोदी के बयान में स्पष्ट रूप से प्रतिबिंबित किया गया था जिसमें उन्होंने कहा था कि "प्रतिद्वंद्विता का एशिया हम सभी को पीछे रखेगा, सहयोग की भावना से प्रेरित एशिया इस सदी को आकार देगा।''
- **पाकिस्तान के साथ संबंधों में सुधार:** SCO द्वारा सदस्य देशों के बीच आर्थिक सहयोग, व्यापार, ऊर्जा और क्षेत्रीय कनेक्टिविटी को मज़बूत करने के प्रयासों का प्रयोग पाकिस्तान के साथ संबंधों को सुधारने के लिये किया जाना चाहिये, साथ ही पाकिस्तान द्वारा यूरेशिया तक भारत की पहुँच में खड़ी की गई बाधाओं को हटाने की मांग की जानी चाहिये जिससे तापी (TAPI) जैसी परियोजनाओं को प्रोत्साहन प्रदान किया जा सके।
- **सैन्य सहयोग में वृद्धि:** हाल के वर्षों में क्षेत्र में आतंकवाद संबंधी गतिविधियों में वृद्धि को देखते हुए यह बहुत ही आवश्यक हो गया है कि SCO द्वारा एक 'सहकारी और टिकाऊ सुरक्षा ढाँचे' का विकास किया जाए, साथ ही क्षेत्रीय आतंकवाद विरोधी संरचना को और अधिक प्रभावी बनाए जाने का भी प्रयास किया जाना चाहिये।

निष्कर्ष:

SCO की भूमिका और इसके उद्देश्यों की व्यापकता वर्तमान में न सिर्फ क्षेत्रीय बल्कि वैश्विक रणनीतिक तथा आर्थिक परिदृश्य के लिये भी बढ़ती हुई प्रतीत होती है। वर्तमान परिदृश्य में SCO के एक नए सदस्य के रूप में भारत को एक उपयुक्त एवं व्यापक यूरेशियन रणनीति तैयार करने की आवश्यकता होगी।

यह रणनीति 'विकास साझेदारी के माध्यम से स्थायी राष्ट्र-निर्माण, संप्रभुता बनाए रखने, इस क्षेत्र को आतंकवाद और अतिवाद का केंद्र बनने से रोकने' के भारत के क्षेत्रीय हित को पूरा करने में भी सहायक हो सकती है। साथ ही भारत के लिये यह भी बहुत महत्त्वपूर्ण होगा कि यहक्षेत्र प्रतिद्वंद्वियों के लिये भू-राजनीतिक का एक नया अखाड़ा न बन जाए।

नोट :

भारत-वियतनाम संबंध

संदर्भ:

हाल ही में भारत और वियतनाम के रक्षा मंत्रियों के बीच वीडियो-कॉन्फ्रेंस के माध्यम से एक द्विपक्षीय बैठक का आयोजन किया गया। इस बैठक के दौरान दोनों पक्षों ने भविष्य की बेहतर संभावनाओं के लिये एक नए संयुक्त विज़न स्टेटमेंट पर काम करने के लिये अपनी प्रतिबद्धता व्यक्त की। भारत दोनों देशों के साझा हितों और रणनीतिक चिंताओं के संदर्भ में वियतनाम को एक भरोसेमंद मित्र देश के रूप में देखता है। वर्तमान में दोनों ही देश रक्षा, व्यापार और भू-राजनीतिक क्षेत्र के साथ कई अन्य महत्त्वपूर्ण क्षेत्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय मामलों में एक-दूसरे का सहयोग कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त दोनों देश समानता पर आधारित बहुपक्षवाद, सभी देशों की क्षेत्रीय अखंडता और संप्रभुता का सम्मान, अंतर्राष्ट्रीय कानून तथा व्यवस्था का सम्मान जैसे महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक मूल्यों को साझा करते हैं। भारत और वियतनाम के बीच अंतर्राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय मुद्दों पर यह व्यापक सहमति भविष्य में दोनों देशों के बीच संबंधों को मज़बूत बनाने की संभावना का संकेत देती है।

पृष्ठभूमि:

- भारत और वियतनाम के संबंध दोनों देशों की स्वतंत्रता के बाद से ही मित्रवत तथा सौहार्दपूर्ण रहे हैं।
- वर्ष 1954 में 'डिएन बिएन फु' (Dien Bien Phu) में फ्राँसीसी सेना के विरूद्ध वियतनाम की विजय के बाद पंडित जवाहर लाल नेहरू वियतनाम जाने वाले पहले अंतर्राष्ट्रीय नेताओं में से एक थे।
- वर्ष 1956 में भारत ने हनोई (वियतनाम की राजधानी) में अपने महावाणिज्य दूतावास की स्थापना की थी।
- फरवरी 1958 में वियतनाम के राष्ट्रपति 'हो ची मिन्ह' पहली बार भारत की यात्रा पर आए जिसके बाद वर्ष 1959 में भारतीय राष्ट्रपति राजेंद्र प्रसाद ने वियतनाम की यात्रा की।
- वियतनाम ने वर्ष 1972 में भारत में अपने राजनयिक मिशन की स्थापना की। भारत,वियतनाम में अमेरिकी हस्तक्षेप के विरूद्ध आवाज़ उठाने में वियतनाम के साथ खड़ा हुआ।
- वर्ष 1990 के दशक के शुरुआती वर्षों में दक्षिण-पूर्व एशिया और पूर्वी एशिया के साथ आर्थिक एकीकरण तथा राजनीतिक सहयोग के विशिष्ट उद्देश्य से भारत द्वारा अपनी 'लुक ईस्ट नीति' की शुरुआत के चलते भारत एवं वियतनाम के संबंध और भी मज़बूत हो गए।
- वर्ष 2016 में दोनों देशों के बीच 'व्यापक रणनीतिक साझेदारी' के तहत रक्षा सहयोग को भी मज़बूती प्रदान की गई है।

सहयोग के क्षेत्र:

- सामरिक भागीदारी: दोनों ही देशों ने भारत की 'हिंद-प्रशांत सागरीय पहल' (Indo-Pacific Oceans Initiative- IPOI) और हिंद-प्रशांत के संदर्भ में आसियान के दृष्टिकोण ('क्षेत्र में सभी के लिये साझा सुरक्षा, समृद्धि और प्रगति') को ध्यान में रखते हुए अपनी रणनीतिक साझेदारी को मज़बूत करने पर सहमति व्यक्त की।
- IPOI भारतीय प्रधानमंत्री द्वारा नवंबर 2019 में थाईलैंड में आयोजित पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन के दौरान लॉन्च की गई एक पहल है।
- यह पहल समुद्री सुरक्षा सहित सात महत्त्वपूर्ण बिंदुओं पर केंद्रित है, जिसमें समुद्री पारिस्थितिकी, समुद्री संसाधन, 'क्षमता निर्माण और संसाधन साझाकरण', 'आपदा जोखिम में कमी तथा आपदा प्रबंधन,' 'विज्ञान, प्रौद्योगिकी और शैक्षणिक सहयोग', 'व्यापार कनेक्टिविटी व समुद्री परिवहन शामिल' है।
  - भारत ने वियतनाम से IPOI के सात बिंदुओं में से एक पर भागीदार बनाने का आह्वान किया है।
- **आर्थिक सहयोग:** 'आसियान-भारत मुक्त व्यापार संधि' पर हस्ताक्षर किये जाने के बाद से भारत और वियतनाम के बीच आर्थिक क्षेत्र के सहयोग में काफी प्रगति देखने को मिली है।
  - भारत को पता है कि वियतनाम दक्षिण-पूर्व एशिया में राजनीतिक स्थिरता और पर्याप्त आर्थिक विकास के साथ एक संभावित क्षेत्रीय शक्ति है।
  - इसके साथ ही हाल के वर्षों में वियतनाम ने आर्थिक क्षेत्र में भी महत्त्वपूर्ण प्रगति की है, वैश्विक व्यापार में गिरावट के बावजूद इसमें वृद्धि बनी रही। इस प्रगति के लिये वियतनाम के बढ़ते निर्यात अधिशेष को उत्तरदायी माना जाता है। वियतनाम के मध्यम वर्ग की वजह से भी बाज़ार में स्थिरता की स्थिति देखी गई है।

नोट :

- वियतनाम ने दक्षिण चीन सागर में तेल और गैस के स्रोतों की खोज हेतु भारत द्वारा अपनी उपस्थिति का विस्तार किये जाने के प्रति भी उत्सुकता व्यक्त की है। साथ ही वियतनाम ने दृढ़ता के साथ स्पष्ट किया है कि यह क्षेत्र पूर्णरूप से वियतनाम के आर्थिक क्षेत्र का हिस्सा है।
- भारत द्वारा 'त्वरित प्रभाव परियोजनाओं' (Quick Impact Projects- QIP) के माध्यम से वियतनाम में विकास और क्षमता सहयोग में निवेश किया जा रहा है, इसके साथ ही वियतनाम के मेकांग डेल्टा क्षेत्र में जल संसाधन प्रबंधन, 'सतत् विकास लक्ष्य' (SDG), और डिजिटल कनेक्टिविटी के क्षेत्र में भी भारत द्वारा निवेश किया गया है।
- भारत द्वारा वर्ष 1976 से ही वियतनाम को कई मौकों पर 'लाइन ऑफ क्रेडिट' के माध्यम से आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई गई है।

रक्षा सहयोग:

- वर्ष 2009 में भारत और वियतनाम के रक्षा मंत्रियों के बीच रक्षा सहयोग से जुड़े एक समझौता-ज्ञापन (MoU) पर हस्ताक्षर के बाद दोनों देशों के बीच रक्षा सहयोग में काफी प्रगति हुई है।
- वर्तमान में जहाँ वियतनाम ने अपने सशस्त्र बलों के आधुनिकीकरण में रुचि दिखाई है, वहीं भारत भी इस रणनीतिक क्षेत्र में शांति बनाए रखने के लिये अपने दक्षिण-पूर्व एशियाई साझेदारों की रक्षा क्षमताओं को पर्याप्त रूप से विकसित करने का इच्छुक रहा है।
  - वियतनाम ने भारत की आकाश (सतह से हवा में मारक क्षमता वाली मिसाइल प्रणाली) और ध्रुव हेलीकॉप्टर तथा ब्रह्मोस मिसाइलों के प्रति अपनी रुचि दिखाई है।
  - इसके अतिरिक्त दोनों देशों के बीच रक्षा सहयोग के अंतर्गत क्षमता निर्माण, सामान्य सुरक्षा चिंताओं से निपटना, कर्मियों का प्रशिक्षण और रक्षा अनुसंधान एवं विकास में सहयोग आदि भी शामिल हैं।
- **चीन का मुद्दा:** भारत और वियतनाम दोनों के लिये रणनीतिक दृष्टि से चीन का मुद्दा बहुत ही महत्त्वपूर्ण है।
- दोनों ही देशों ने चीन के साथ युद्ध लड़े हैं और दोनों का ही चीन के साथ सीमा विवाद रहा है, साथ ही चीन ने आक्रामक रूप से अभी भी दोनों देशों की सीमाओं में अतिक्रमण की गतिविधियाँ जारी रखी हैं।
- ऐसे में चीन की आक्रामकता को नियंत्रित करने के लिये भारत और वियतनाम के बीच सहयोग में वृद्धि होना स्वाभाविक है।

आगे की राह:

- **वैश्विक स्तर पर समन्वय:** हिंद-प्रशांत क्षेत्र में उभरती रणनीतिक चुनौतियों (विशेषकर क्षेत्र में चीन की आक्रामकता से जुड़ी) को देखते हुए भारत और वियतनाम को संयुक्त राष्ट्र जैसे बहुपक्षीय संस्थाओं के साथ मिलकर कार्य करना चाहिये।
  - इस संदर्भ में भारत और वियतनाम को शीघ्र ही संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में प्राप्त होने वाली अपनी अस्थायी सदस्यता का लाभ उठाना चाहिये।
- **आर्थिक क्षेत्र में समन्वय:** वर्तमान में भारत और वियतनाम को वैश्विक स्तर पर उठ रही चीन विरोधी भावनाओं और कई बड़ी कंपनियों द्वारा अपने उत्पादन केंद्रों को चीन से किसी अन्य देश में स्थानांतरित करने के निर्णय के बीच उत्पन्न हुए आर्थिक अवसरों का पूरा लाभ उठाना चाहिये।
  - हालाँकि वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुए भारत को एक व्यापक रणनीति की तैयारी पर कार्य करना होगा, ताकि भारत द्वारा 'क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक साझेदारी' (RCEP) में शामिल न होने के निर्णय का दोनों देशों के संबंधों पर कोई प्रतिकूल प्रभाव न पड़े।
- इसके अतिरिक्त वियतनाम की खुली व्यापार नीति से भी भारत बहुत कुछ सीख सकता है, जिसके कारण पिछले 8 वर्षों में वियतनाम के निर्यात में लगभग 240% की वृद्धि हुई है।

अन्य क्षेत्रीय सहयोगियों के साथ समन्वय:

- वर्तमान में आसियान समूह में वियतनाम की अध्यक्षता भारत और आसियान के लिये क्षेत्रीय सुरक्षा मुद्दों पर मिलकर कार्य करने की प्रक्रिया को आसान बना सकती है।
- दक्षिण चीन सागर में चीन के आक्रामक रवैये के कारण आसियान के तहत ही इंडोनेशिया जैसी कुछ बड़ी शक्तियों के चीन के खिलाफ खुलकर सामने आने की भी संभावना है।
- **मज़बूत संबंधों की स्थापना:** भारत और वियतनाम को रक्षा सौदों को अंतिम रूप देने के लिये बातचीत की प्रक्रिया में तेज़ी लानी चाहिये।

हाल ही में गलवान घाटी (Galwan Valley) में भारत और चीन के बीच उपजे तनाव और चीन द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में अंतर्राष्ट्रीय कानूनों [जैसे- 'समुद्री कानून पर संयुक्त राष्ट्र अभिसमय' (UN Convention on the Law of the Sea-UNCLOS) आदि] के उल्लंघन के मामलों के कारण वियतनाम जैसे देश के साथ भारत के सैन्य संबंधों को मज़बूत किया जाना बहुत ही आवश्यक हो गया है।

नोट :

वैश्विक ऊर्जा संक्रमण

संदर्भ:

हाल ही में 'तेल निर्यातक देशों के संगठन' (Organization of Petrolium Exporting Countries- OPEC) अर्थात् ओपेक द्वारा कच्चे तेल के उत्पादन की सीमा बढ़ाने की अनुमति देने का निर्णय लिया गया है। कच्चे तेल का उत्पादन बढ़ने से वैश्विक बाज़ार में इसके मूल्य में गिरावट आएगी जिससे भारत जैसे तेल आयातक देशों को प्रत्यक्ष रूप से लाभ होगा।

हालाँकि वर्तमान में वैश्विक ऊर्जा प्रणाली जीवश्म ईंधनों पर अपनी पूर्ण निर्भरता को कम करने के साथ स्वच्छ और नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों की ओर बढ़ते हुए एक बड़े परिवर्तन के दौर से गुज़र रही है। वर्तमान में कम कार्बन उत्सर्जन की तरफ यह झुकाव वैश्विक ऊर्जा से जुड़ी भू-राजनीति को भी प्रभावित करता है। ऐसे में भारत की ऊर्जा कूटनीति केवल सस्ते तेल तक ही सीमित नहीं रहनी चाहिये बल्कि यह स्वच्छ पर्यावरण की प्रतिबद्धताओं का पालन करते हुए भारत की ऊर्जा ज़रूरतों को पूरा करने वाली दीर्घकालिक नीतियों पर केंद्रित होनी चाहिये।

अत: वर्तमान में द्विपक्षीय ऊर्जा कूटनीति इस परिवर्तन के भू-राजनीतिक परिणामों का प्रबंधन करने के लिये एक महत्त्वपूर्ण विदेश नीति उपकरण है।

वैश्विक ऊर्जा भू-राजनीति संक्रमण:

- **कच्चा तेल और वैश्विक भू-राजनीति:** कोयले से हटते हुए खनिज तेल को ऊर्जा के मुख्य स्रोत के रूप में अपनाए जाने के साथ ही मध्य-पूर्व वैश्विक भू-राजनीति का एक महत्त्वपूर्ण केंद्र बनकर उभरा और इसके साथ ही खनिज तेल राष्ट्रीय सुरक्षा का एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा बन गया।
  - 20वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के बाद से तेल संसाधनों पर नियंत्रण ने कई युद्धों में केंद्रीय भूमिका निभाई है, जैसे कि ईरान-इराक युद्ध (1980-1988), खाड़ी युद्ध (1990-1991) आदि।
- ग्लोबल वार्मिंग और वैश्विक चिंता: लगभग आधी से अधिक सदी से तेल और प्राकृतिक गैस ऊर्जा की भू-राजनीति के केंद्र में रहे हैं। हालाँकि तेल और गैस पर इसी अत्यधिक निर्भरता ने ही ग्लोबल वार्मिंग जैसी गंभीर समस्या को हमारे समक्ष ला खड़ा किया है।
  - क्योटो प्रोटोकॉल (Kyoto Protocol) और पेरिस समझौते (Paris Agreement) पर हस्ताक्षर किये जाने जैसी कई महत्त्वपूर्ण घटनाओं ने ग्लोबल वार्मिंग की चुनौती से निपटने हेतु वैश्विक प्रयासों में महत्त्वपूर्ण कदमों/पहलों को चिह्नित किया।
- **कार्बन उत्सर्जन पर नियंत्रण:** पेरिस समझौते के तहत देशों ने पूर्व-औद्योगिक स्तरों की तुलना मं औसत वैश्विक तापमान में वृद्धि को 2 डिग्री सेल्सियस से कम किये जाने हेतु कार्य करने के लिये प्रतिबद्धता व्यक्त की है।
  - यह विश्व के कई हिस्सों में पहले से ही लागू डीकार्बोनाइज़ेशन के प्रयासों को मज़बूती प्रदान करता है।
  - इन दोनों तत्त्वों के समायोजन ने वैश्विक ऊर्जा प्रणाली को नया रूप देना शुरू कर दिया है। इसे भारत द्वारा अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन (International Solar Alliance- ISA) की स्थापना के उदाहरण के रूप देखा जा सकता है।

वैश्विक ऊर्जा संक्रमण की चुनौतियाँ:

- तेल उत्पादक देशों की चुनौतियाँ: वर्तमान में वैश्विक ऊर्जा संक्रमण ने तेल और गैस उत्पादक देशों के लिये एक नई चुनौती प्रस्तुत की है, विशेष रूप से अर्थव्यवस्था में विविधता की कमी वाले ऐसे देश जो अपने खर्च के लिये तेल से प्राप्त राजस्व पर बहुत अधिक निर्भर करते हैं।
  - यदि वैश्विक ऊर्जा संक्रमण अनुमान से कहीं अधिक तेज़ी से होता है और इस दौरान ये देश अपने आपको इस परिवर्तन के लिये तैयार नहीं कर पाते हैं, तो इसके परिणाम सामाजिक-आर्थिक के साथ भू-राजनीतिक दृष्टिकोण से भी गंभीर हो सकते हैं।
- **ऊर्जा एकीकरण से उत्पन्न खतरे:** अक्षय ऊर्जा के प्रसार से विद्युतीकरण बढ़ेगा और विद्युत के क्षेत्र में सीमा पार व्यापार को भी बढ़ावा मिलेगा। उदाहरण के लिये भारत द्वारा 'एक सूर्य एक विश्व एक ग्रिड प्रणाली (One Sun One World One Grid- OSOWOG) की स्थापना का आह्वान।
  - विद्युत ग्रिडों का डिजिटलीकरण भी कुछ नए सुरक्षा जोखिम प्रस्तुत करता है। क्योंकि आतंकवादी समूह या शत्रु देश आर्थिक और सामाजिक नुकसान पहुँचाने हेतु महत्त्वपूर्ण सूचनाओं को प्राप्त करने या उन्हें प्रभावित करने के लिये इस प्रणाली को हैक करने का प्रयास कर सकते हैं।

नोट :

- **दुर्लभ-मृदा तत्त्वों की आपूर्ति:** पवन और सौर ऊर्जा संसाधनों के साथ इलेक्ट्रिक कारों का तीव्र विकास उनके उत्पादन के लिये आवश्यक दुर्लभ खनिजों की आपूर्ति की सुरक्षा से जुड़ी चिंताओं को भी बढ़ाता है।
  - दुर्लभ खनिजों की आपूर्ति में चीन का वर्चस्व और अमेरिका तथा चीन के बीच मौजूदा भू-राजनीतिक तनाव दोबारा वर्ष 1978 के कोबाल्ट संकट जैसी स्थिति उत्पन्न कर सकता है।

कोबाल्ट संकट:

- कोबाल्ट संकट वर्ष 1978 में विश्व खनिज निष्कर्षण का केंद्र माने जाने वाले मध्य अफ्रीकी ज़ाईर गणराज्य के कटंगा प्रांत में संघर्ष की शुरुआत के बाद प्रारंभ हुआ।
- इस संकट के कारण वैश्विक स्तर पर कोबाल्ट की आपूर्ति में भारी कमी देखी गई, जिससे अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में इसका मूल्य काफी बढ़ गया।

भारत के लिये आगे की राह:

- भारत की ऊर्जा कूटनीति के लिये सबसे बड़ी चुनौती बगैर तेल निर्भरता वाले भविष्य के लिये इस प्रकार ज़मीन तैयार करने की होगी कि तेल बाज़ार इस व्यापक पारगमन में बाधक न होकर सहायक की भूमिका निभाए।
  - इस संदर्भ में भारत ऊर्जा कूटनीति को जीवाश्म ईंधन और नवीकरणीय ऊर्जा दोनों ही पक्षों पर अपना ध्यान केंद्रित करना चाहिये।
- **जीवाश्म ईंधन के संदर्भ में:** अमेरिका और चीन के बाद भारत विश्व का तीसरा सबसे बड़ा तेल आयातक देश है। ऐसे में सरकार को कच्चे तेल की आपूर्ति के लिये सबसे पसंदीदा" व्यापार की शर्तों को सुरक्षित करने हेतु एक बड़ा बाज़ार होने की अपनी ताकत का लाभ उठाना चाहिये।
  - इस संदर्भ में सरकार देश में तेल की मांग में हो रही वृद्धि और विकसित देशों में तेल की मांग में गिरावट का हवाला देते हुए प्रमुख तेल तथा गैस उत्पादक देशों के साथ दीर्घकालिक समझौते लागू करने के लिये बातचीत कर सकती है।
- **नवीकरणीय ऊर्जा के संदर्भ में:** नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों की मांग में वृद्धि को देखते हुए भारत को इस क्षेत्र में विश्व स्तरीय और प्रतिस्पर्द्धी विनिर्माण प्रणालियों का विकास करना चाहिये।
  - इस संदर्भ में भारत को सबसे पहले कोयला आधारित विद्युत संयंत्रों को बंद करने तथा उनका स्थान लेने के लिये अभूतपूर्व पैमाने और गति से सौर एवं पवन ऊर्जा संयंत्रों की स्थापना करनी होगी।
  - दूसरा, भारत को इस नवीकरणीय ऊर्जा को उद्योग और परिवहन जैसे अर्थव्यवस्था के प्रमुख क्षेत्रों तक पहुँचाना होगा, जिनमें परंपरागत रूप से विद्युत का उपयोग नहीं किया जाता है।
  - तीसरी और सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि भारत को मूल रूप से अधिक ऊर्जा कुशल और आत्मनिर्भर बनना होगा।

निष्कर्ष:

वैश्विक ऊर्जा संक्रमण से बहुत सी चुनौतियाँ और नई संभावनाएँ उभर कर सामने आई हैं। हालाँकि यह परिवर्तन भारत के विकास के लिये एक महत्त्वपूर्ण अवसर प्रदान करता है, क्योंकि वर्तमान में भारत अपने बड़े विदेशी मुद्रा भंडार के माध्यम से वैश्विक बाज़ार में तेल की बढ़ती कीमतों की चुनौती से उबरते हुए प्राकृतिक गैस और नवीकरणीय ऊर्जा से जुड़ी अपनी नवीन योजनाओं के लिये आवश्यक बड़े निवेश को आकर्षित करने पर ध्यान केंद्रित कर सकता है।

मानव अधिकारों के बदलते प्रतिमान

संदर्भ:

संयुक्त राष्ट्र महासभा (United Nations General Assembly) द्वारा वर्ष 1948 में मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा (Universal Declaration of Human Rights- UDHR) को अपनाए जाने की स्मृति में प्रतिवर्ष 10 दिसंबर के दिन को अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार दिवस के रूप में मनाया जाता है।

नोट :

UDHR मानवाधिकारों के संदर्भ में एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज़ होने के साथ ही इस क्षेत्र की बड़ी उपलब्धि है। यह उन अविच्छेद्य अधिकारों की घोषणा करता है, जिन्हें हर किसी को एक मनुष्य होने के नाते बगैर उनकी जाति, रंग, धर्म, लिंग, भाषा, राजनीतिक या अन्य विचारधारा, राष्ट्रीय या सामाजिक मूल, संपत्ति, जन्म या किसी अन्य स्थिति के भेदभाव के प्राप्त करने का हक है। यह दिन UDHR के मूलभूत योगदान के साथ मानव अधिकारों की अविच्छेद्यता और सार्वभौमिकता के महत्त्व को भी रेखांकित करता है।

हालाँकि वर्तमान में विश्व भर में (विशेषकर विकासशील देशों में) मानवाधिकारों की अवधारणा और इसकी सार्वभौमिकता को पूरी तरह प्राप्त नहीं किया जा सका है।

इसके अतिरिक्त COVID-19 महामारी ने गरीबी, संरचनात्मक भेदभाव में वृद्धि के साथ- साथ मानव अधिकारों के संरक्षण में बाधक अन्य असमानताओं को अधिक गहरा कर दिया है।

अत: वर्तमान में मानवाधिकारों की परिभाषा और इनके संरक्षण के प्रावधानों पर पुन: विचार करने की आवश्यकता है।

मानव अधिकारों का विकास:

- **नागरिक और राजनीतिक अधिकार (पहली पीढ़ी के अधिकार):**
- इन अधिकारों का उदय सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी के दौरान कुछ सिद्धांतों के रूप में हुआ और इनमें से ज़्यादातर राजनीतिक चिंताओं पर आधारित थे।
- इन अधिकारों के दो केंद्रीय विचार थे- 'व्यक्तिगत स्वतंत्रता और राज्य (State) की निरंकुशता से लोगों की रक्षा'।
- नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय नियम (ICCPR) में नागरिक और राजनीतिक अधिकारों का वर्णन किया गया है।

सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अधिकार (दूसरी पीढ़ी के अधिकार):

- ये अधिकार लोगों के साथ रहने, काम करने और उनकी बुनियादी आवश्यकताओं से संबंधित हैं।
- ये अधिकार समानता के विचारों और आवश्यक सामाजिक, आर्थिक, वस्तुओं, सेवाओं एवं अवसरों तक पहुँच की गारंटी पर आधारित हैं।
- ये औद्योगीकरण की शुरुआत और श्रमिक-वर्ग के उदय के साथ अंतर्राष्ट्रीय मान्यता के विषय बन गए।
- इन अधिकारों ने जीवन की गरिमा के मायने को लेकर नए विचारों और मांग का मार्ग प्रसस्त किया।
- 'आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय प्रतिज्ञा-पत्र' (ICESCR) में इन अधिकारों को रेखांकित किया गया है।

तीसरी पीढ़ी के अधिकार- 'एकजुटता का अधिकार':

- **आवश्यकता क्यों ?:** COVID-19 महामारी ने हमें ऐसी बहुत सी बाधाओं के बारे में परिचित कराया है जो दूसरी पीढ़ी के अधिकारों के लिये एक चुनौती बन सकते हैं।
- विश्व के विभिन्न हिस्सों में युद्ध, अत्यधिक गरीबी, पारिस्थितिक और प्राकृतिक आपदाओं जैसी स्थितियों से स्पष्ट है कि मानवाधिकारों के संदर्भ में बहुत सीमित प्रगति ही हुई है।
- इन कारणों ने मानव अधिकारों की एक नई श्रेणी की मान्यता को आवश्यक बना दिया है।
- एकजुटता का अधिकार: तीसरी पीढ़ी के अधिकारों का वैचारिक आधार एकजुटता के का है। तीसरी पीढ़ी के तहत सामान्य रूप से सबसे अधिक शामिल किये जाने वाले विशिष्ट अधिकारों में से कुछ निम्नलिखित हैं:
  - विकास, शांति, स्वस्थ पर्यावरण, मानव जाति की सामूहिक विरासत के दोहन को साझा करना, संचार और मानवीय सहायता आदि।

एकजुटता के अधिकार से जुड़ी चुनौतियाँ:

- **व्यक्तिगत उन्मुखता:** कुछ विशेषज्ञ इन अधिकारों के विचार के खिलाफ हैं, क्योंकि ये अधिकार सामूहिक हैं (समुदायों या पूरे राज्य द्वारा धारण किये जाने के अर्थ में)।
  - उनका तर्क है कि मानवाधिकार आंतरिक रूप से व्यक्तिगत हैं या केवल व्यक्तियों द्वारा ही धारण किये जा सकते हैं।
- **उत्तरदायित्व:** चूँकि तीसरी पीढ़ी के अधिकारों की रक्षा का उत्तरदायित्व राज्य (State) का न होकर अंतर्राष्ट्रीय समुदाय का है, ऐसे में इनके प्रति जवाबदेही की गारंटी देना असंभव है।

नोट :

आगे की राह:

- COVID-19 महामारी के बाद विश्व में मानवाधिकारों के मुद्दे को वैश्विक व्यवस्था के केंद्र में रखा जाना चाहिये। इस संदर्भ में मानवाधिकारों में वर्तमान समय की ज़रूरतों के अनुरूप नए सुधारों को शामिल करने के लिये इसका विकास और विस्तार किया जाना चाहिये। इनमें से कुछ सुधार निम्नलिखित हैं:
- **सभी प्रकार के भेदभाव को समाप्त करना:** COVID-19 महामारी ने जहाँ समाज के सभी वर्गों के लिये आर्थिक चुनौतियों को जन्म दिया हैं, वहीं इसके कारण समाज में संरचनात्मक भेदभाव और नस्लवाद को बढ़ावा मिला है। ऐसे में COVID-19 महामारी के बाद समानता और गैर-भेदभाव विश्व की प्रमुख आवश्यकताओं में से एक होंगे।
- **असमानता से निपटना:** इस महामारी से उबरने के साथ-साथ असमानता की चुनौती से निपटना बहुत आवश्यक है। इसके लिये देशों को व्यापक आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों को बढ़ावा देना चाहिये और उनकी रक्षा सुनिश्चित की जानी चाहिये तथा उन्हें UDHR के दायरे में भी लाना चाहिये।
- **भागीदारी और एकजुटता को प्रोत्साहित करना:** मानवाधिकारों की रक्षा के लिये यह बहुत ही आवश्यक है कि समाज के विभिन्न वर्गों और क्षेत्रों से आने वाले लोगों को उनके अधिकारों के बारे में जागरूक किया जाए तथा उन्हें अपने अधिकारों के लिये खड़े होने के साथ ही दूसरों की स्वतंत्रता का सम्मान करने के लिये प्रोत्साहित किया जाए।
- COVID-19 महामारी के बाद वर्तमान और भविष्य की पीढ़ी के लिये एक बेहतर विश्व के निर्माण में व्यक्तियों से लेकर सरकारों तक, सिविल सोसाइटी और ज़मीनी स्तर के समुदायों से लेकर निजी क्षेत्र तक, हर किसी की भूमिका महत्त्वपूर्ण होगी।
- **सतत् विकास को बढ़ावा:** मानवाधिकार सभी सतत् विकास लक्ष्यों (SDG) पर होने वाली प्रगति से प्रेरित हैं, और SDGs मानवाधिकारों की प्रगति से।
  - ऐसे में मानवाधिकार, एसडीजी एजेंडा (SDG-2030) और पेरिस समझौते को इस महामारी के दुष्प्रभावों से उबरने की नीतियों के लिये आधारशिला के रूप में अपनाया जाना चाहिये ताकि समाज के किसी भी वर्ग का कोई भी व्यक्ति इसमें पीछे न रह जाए।

निष्कर्ष:

वर्तमान में समाज में व्याप्त भेदभाव सहित अन्य बाधाओं को दूर करते हुए मानवाधिकारों को बढ़ावा देकर इस महामारी से पूरी तरह से उबरकर एक बेहतर, अधिक लचीले, न्यायसंगत और टिकाऊ विश्व की स्थापना की जा सकती है।

नोट :

सामाजिक न्याय

वन अधिकार कानूनों का कार्यान्वयन

संदर्भ:

Covid-19 महामारी ने समाज के अन्य वर्गों की तरह ही वनों पर आश्रित समुदायों को भी गंभीर रूप से प्रभावित किया है। इस महामारी के कारण इन समुदायों को आजीविका के साथ-साथआश्रय, खाद्य असुरक्षा, शारीरिक कठिनाइयों और स्वास्थ्य चिंताओं आदि से जुड़ी अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा है।

ऐसे में वर्तमान में इस चुनौती से निपटने के लिये 'अनुसूचित जनजाति एवं अन्य पारंपरिक वनवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006' या 'वन अधिकार अधिनियम' (Forest Rights Act- FRA) का प्रभावी कार्यान्वयन और अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है। FRA देश में वनों पर आश्रित जनजातियों और अन्य पारंपरिक वनवासियों (कम-से-कम 200 मिलियन आबादी) के अधिकारों के संरक्षण तथा उनकी अन्य समस्याओं के समाधान में पूरी तरह सक्षम है। हालाँकि कि इस अधिनियम के लागू होने के लगभग डेढ़ दशक बाद भी इसके कार्यान्वयन में व्याप्त शिथिलता के कारण इस अधिनियम का पूरा लाभ नहीं मिल पाया है।

'वन अधिकार अधिनियम' और इससे जुड़े अन्य मुद्दे:

- भारत का 'वन अधिकार अधिनियम' वनवासी समुदायों को आजीविका के साथ-साथ वनों के संरक्षण के लिये वनों का उपयोग, प्रबंधन और संचालन/नियंत्रण का अधिकार प्रदान करता है। हालाँकि इस अधिनियम के कार्यान्वयन में व्याप्त कमियाँ अभी भी एक बड़ी समस्या बना हुई है।
  - FRA के कार्यान्वयन में व्याप्त कमियों के प्रमुख कारण:
  - राजनीतिक प्रतिबद्धता का अभाव।
  - जनजातीय मामलों के विभाग (Department of Tribal Affairs) के पास पर्याप्त मानव और वित्तीय संसाधनों की कमी, जो कि FRA के कार्यान्वयन के लिये नोडल एजेंसी है।
  - वन विभाग में नौकरशाही के बीच आंतरिक गतिरोध भी एक बड़ी समस्या है, जो विभिन्न स्तरों पर निर्णयों को प्रभावित करती है।
  - ज़िला और उप-प्रभाग स्तर की समितियों का खराब कामकाज या उनकी निष्क्रियता भी एक बड़ी चुनौती रही है, गौरतलब है कि ये समितियाँ ही ग्राम सभाओं द्वारा प्रस्तुत आवेदनों की समीक्षा करती हैं।
- इस अधिनियम को पारित हुए लगभग डेढ़ दशक बीत चुका है परंतु अभी तक 'केंद्रीय पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय' द्वारा FRA के तहत मात्र 4 करोड़ हेक्टेयर (लगभग 13%) भूमि को ही चिह्नित किया गया है।
  - FRA संबधित समुदायों के लिये उनके वन अधिकारों को प्रदान करने में देरी और उसके कारण बढ़ती भू-असुरक्षा की वजह से इन समुदायों की सुभेद्यता में वृद्धि होगी जो इस महामारी के दौरान तथा इसके बाद भी वनों पर आश्रित समुदायों की आजीविका एवं खाद्य असुरक्षा को गंभीर रूप से प्रभावित करेगा।

वनों पर आश्रित समुदायों के समक्ष अन्य चुनौतियाँ:

- **सामाजिक अवसंरचना का अभाव:** जनजातीय क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव और कुपोषण, मलेरिया, कुष्ठ रोग, आदि बीमारियों तथा स्वास्थ्य संबंधी चिंताओं की व्यापकता ने COVID-19 जैसी किसी भी बड़ी महामारी से निपटने की क्षमता को बड़े पैमाने पर सीमित कर दिया है।
- देश के सभी राज्यों में जनजातीय और वनवासी समुदायों के बीच सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) की पहुँच में कई प्रकार की कमियाँ देखने को मिली हैं।
- कई रिपोर्टों में देश के विभिन्न आदिवासी क्षेत्रों से भुखमरी की बात भी सामने आई है, गौरतलब है कि ऐसे समुदाय सामाजिक-आर्थिक योजनाओं का अधिकांश लाभ प्राप्त करने से वंचित रह जाते हैं।

नोट :

लघु वनोत्पाद से संबंधित मुद्दे:

- मात्र लघु वनोत्पाद (Minor Forest Produce- MFP) का स्वामित्त्व प्रदान करने से आदिवासियों की आजीविका में कोई बड़ा सुधार नहीं होगा, गौरतलब है कि वन विभाग द्वारा किये जाने वाले वृक्षारोपण में व्यापक विविधता के अभाव के कारण लघु वन उत्पादों (तेंदू पत्ता को छोड़कर) के समग्र उत्पादन में भारी गिरावट देखने को मिली है।
- इसके अतिरिक्त अधिकांश लघु वनोत्पाद अभी भी 'राष्ट्रीयकृत' (Nationalised) ही हैं, जिसका अर्थ है कि इन उत्पादों को केवल सरकारी एजेंसियों को ही बेचा जा सकता है।
- COVID-19 महामारी के कारण वनवासियों के लिये लघु वन उत्पादों के संग्रह, उपयोग और बिक्री की प्रक्रिया भी गंभीर रूप से प्रभावित हुई है।

विशेषत: सुभेद्य जनजातीय समूह

(Particularly Vulnerable Tribal Groups- PVTG):

- देश के सुदूर हिस्सों में रह रहे 'विशेषत: सुभेद्य जनजातीय समूह' (PVTG) की उत्तरजीविता भी एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा रहा है।
- PVTG गहरे/घने वनों के प्रमुख संरक्षणकर्त्ता रहे हैं और उन्होंने सदियों से वनों की जैव विविधता का प्रबंधन किया है।
- घने वन संसाधनों, जैव विविधता, प्रकृति, वन्य जीवन को जोड़ने वाला एक जटिल पारिस्थितिकी तंत्र है
- इस पारिस्थितिकी तंत्र को तोड़ने से समुदायों का निर्वासन और उनके बीच अलगाव बढ़ जाएगा जिसका प्रतिकूल प्रभाव वनों पर भी देखने को मिलेगा।

पर्यावरण प्रभाव आकलन संबंधी कानूनों का विलय :

- आदिवासी समुदायों की चुनौतियों में वृद्धि के बीच आत्मनिर्भर भारत पहल के तहत अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने के लिये पर्यावरण से जुड़े कानूनों और नियमों में ढील दिये जाने के प्रयासों ने इन समुदायों के असंतोष को और बढ़ा दिया है।
  - एक अनुमान के अनुसार, वर्ष 2008 से वर्ष 2019 के बीच लगभग 3.9 लाख हेक्टेयर वन भूमि को अन्य विभागों को स्थानांतरित कर दिया गया।
  - हाल ही में सरकार द्वारा पर्यावरण प्रभाव आकलन (EIA) में कुछ छूट दिये जाने और कोयला क्षेत्र में निजी संस्थाओं के प्रवेश से संबंधित मानदंडों के उदारीकरण ने जनजातीय समूहों के गुस्से को बढ़ा दिया है।

आगे की राह:

- **FRA का प्रभावी कार्यान्वयन:** FRA के प्रभावी कार्यान्वयन के माध्यम से न सिर्फ वनों पर आश्रित समुदायों का विकास सुनिश्चित किया जा सकेगा बल्कि इन समुदायों और सरकार के बीच विश्वास भी बढ़ेगा, जिससे भू-संघर्ष, नक्सलवाद और अल्प विकास जैसी समस्याओं में भी कमी आएगी।
- **सहकारी संघवाद:** व्यक्तिगत और सामुदायिक वन प्रबंधन के व्यापक आर्थिक, सामाजिक तथा पारिस्थितिक लाभ को ध्यान में रखते हुए केंद्र सरकार को राज्य सरकारों के सहयोग से 'वन अधिकार अधिनियम, 2006' को प्रभावी रूप से लागू करने का प्रयास करना चाहिये।
  - इसके अतिरिक्त यह भी महत्वपूर्ण है कि केंद्र और राज्यों में जनजातीय मामलों के मंत्रालय द्वारा FRA के प्रभावी कार्यान्वयन हेतु उन्हें मानव तथा वित्तीय संसाधनों की उपलब्धता सुनिश्चित कर मज़बूत बनाया जाए।
- **नौकरशाही में सुधार:** FRA के कार्यान्वयन की निगरानी के लिये आधुनिक तकनीकों के उपयोग को बढ़ावा देने के साथ-साथ ग्राम सभाओं के लिये एक प्रभावी सेवा प्रदाता के रूप में कार्य करने हेतु वन विभाग की नौकरशाही में बड़े सुधार करने होंगे।
- **लघु वन उत्पादों के विपणन में सुधार :** गैर-वन उत्पादों के न्यूनतम समर्थन मूल्य जैसे प्रयासों के माध्यम से विपणन में सहयोग प्रदान करना बहुत ही आवश्यक है, साथ ही सामुदायिक वन उद्यमों को सहयोग प्रदान करने के लिये एक मज़बूत संस्थागत तंत्र स्थापित किया जाना चाहिये।
  - इसके अतिरिक्त सरकार द्वारा ग्राम सभाओं को तकनीकी सहायता भी जारी रखी जानी चाहिये, जिससे न केवल लघु वन उत्पादों का उच्च उत्पादन सुनिश्चित किया जा सकेगा बल्कि आदिवासी अर्थव्यवस्था को पुन: गति प्रदान करने के लिये किसानों को दी जाने वाली आर्थिक सहायता को भी जारी रखा जा सकेगा।

नोट :

निष्कर्ष:

FRA के तहत प्राप्त अधिकारों ने संकट के समय अनेक बाधाओं और चुनौतियों से निपटने में वनों पर आश्रित समुदायों की विभिन्न स्तरों पर सहायता की है। परंतु FRA के कार्यान्वयन में व्याप्त शिथिलता न सिर्फ इन समुदायों की चुनौतियों को बढ़ाती है बल्कि इससे वन संरक्षण के प्रयासों पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ऐसे में वर्तमान समय में इस महामारी के कारण उत्पन्न हुई चुनौतियों को कम करने के लिये 'वन अधिकार अधिनियम' का प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाना बहुत ही आवश्यक है।

भारत में दिव्यांगता: समस्याएँ एवं समाधान

संदर्भ:

किसी शारीरिक या मानसिक विकार के कारण एक सामान्य मनुष्य की तरह किसी कार्य (जो मानव के लिये सामान्य समझी जाने वाली सीमा के भीतर हो) को करने में परेशानी या न कर पाने की क्षमता को दिव्यांगता के रूप में पारिभाषित किया जाता है।

दिव्यांगता विशेष रूप से भारत जैसे विकासशील देश में एक गंभीर सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या है। दिव्यांगता के प्रति संवेदनशीलता बढ़ाने के लिये संयुक्त राष्ट्र द्वारा 3 दिसंबर को विश्व दिव्यांग दिवस के रूप में घोषित किया गया है। यह राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक आदि जैसे जीवन के हर पहलू में दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों तथा उनके हितों को प्रोत्साहित करने की परिकल्पना करता है।

भारत में कई कानूनों और योजनाओं के माध्यम से दिव्यांग व्यक्तियों के लिये अवसरों की सुलभता और समानता सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया है। हालाँकि भारत अभी भी दिव्यांग व्यक्तियों के लिये अवसंरचनात्मक, संस्थागत और दृष्टिकोण/व्यवहार संबंधी बाधाओं को दूर करने में बहुत पीछे है।

भारत में दिव्यांगता:

- आबादी का एक बड़ा अनुपात: दिव्यांग लोगों की आबादी को विश्व के सबसे बड़े गैर-मान्यता प्राप्त अल्पसंख्यक समूह के रूप में देखा जाता है।
  - वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार, भारत में दिव्यांग लोगों की आबादी लगभग 26.8 मिलियन थी, जो देश की कुल आबादी 2.21% है।
  - हालाँकि विश्व बैंक (World Bank) द्वारा जारी एक अनुमान में देश में दिव्यांग लोगों की आबादी लगभग 40 मिलियन बताई गई है।
- **राजनीतिक प्रतिनिधित्व का अभाव:** भारत में दिव्यांग व्यक्तियों की व्यापक आबादी होने के बावजूद स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद पिछले लगभग 7 दशकों में मात्र 4 संसद सदस्य और 6 राज्य विधानसभा सदस्य ही ऐसे रहे हैं जो प्रत्यक्ष रूप से दिव्यांगता से पीड़ित हैं।
- **अतिरिक्त बाधाएँ:** भारत में दिव्यांग लोगों के सामाजिक और आर्थिक विकास की चुनौतियों से प्रभावित होने की संभावनाएँ भी अधिक हैं। चौंकाने वाली बात यह है कि इस आबादी के 45% लोग निरक्षर हैं, जो उनके लिये बेहतर और अधिक सुविधा-संपन्न जीवन के निर्माण प्रक्रिया को मुश्किल बनाता है। यह चुनौती राजनीतिक प्रतिनिधित्व के अभाव में और जटिल हो जाती है।
- **दिव्यांगता और गरीबी:** दिव्यांगता से जुड़ा डेटा गरीबी और दिव्यांगता के बीच पारस्परिक संबंध की ओर संकेत करता है। दिव्यांगता से प्रभावित लोगों की एक बड़ी आबादी ऐसी है जिनका जन्म गरीब परिवारों में हुआ।
  - इसका एक बड़ा कारण यह है कि गरीब परिवारों में गर्भवती माताओं को आवश्यक देखभाल की कमी का सामना करना पड़ता है, ऐसी प्रणालीगत कमियाँ गर्भावस्था के दौरान बड़ी चिकित्सा जटिलताओं का कारण बनती हैं और कई मामलों में इन कमियों के कारण बच्चे जन्मजात दिव्यांगता का शिकार हो जाते हैं।
  - वर्ष 2011 की जनगणना के आँकड़े भी इस तथ्य की पुष्टि करते हैं। इसके अनुसार, देश में दिव्यांग लोगों की कुल आबादी के 69% ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करते हैं।
  - एक अनुमान के अनुसार, वर्तमान में विश्व में दिव्यांग व्यक्तियों की कुल आबादी लगभग 1 बिलियन है और इनमें से लगभग 80% लोग विश्व के अलग-अलग विकासशील देशों में रहते हैं।

नोट :

चुनौतियाँ:

- **संस्थागत अड़चनें:** वर्तमान में भी देश में दिव्यांगता के संदर्भ में जागरूकता, देखभाल, अच्छी और सुलभ चिकित्सा सुविधाओं की भारी कमी बनी हुई है। इसके अतिरिक्त पुनर्वास सेवाओं की पहुँच, उपलब्धता और सदुपयोग में भी कमी देखी गई है।
  - ये कारक दिव्यांग लोगों के लिये निवारक और उपचारात्मक ढाँचा सुनिश्चित करने में बाधक बने हुए हैं।
- **शिथिल कार्यान्वयन:** सरकार द्वारा दिव्यांग व्यक्तियों की स्थिति में सुधार के लिये कई सराहनीय पहलों की शुरुआत की गई है।
  - हालाँकि सरकार द्वारा सुगम्य भारत अभियान (Accessible India Campaign) के तहत सभी मंत्रालयों को दिव्यांग व्यक्तियों के लिये अपने भवनों/इमारतों को सुलभ बनाने का निर्देश दिये जाने के बाद भी वर्तमान में अधिकांश भवन दिव्यांग व्यक्तियों के लिये अनुकूल नहीं हैं।
  - इसी प्रकार 'दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016' के तहत सरकारी नौकरियों और उच्च शिक्षा संस्थानों में दिव्यांग व्यक्तियों के लिये आरक्षण का प्रावधान किया गया है, परंतु वर्तमान में इनमें से अधिकांश पद खाली हैं।
  - गौरतलब है कि भारत 'दिव्यांग व्यक्तियों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र अभिसमय' (United Nations Convention on the Rights of Persons with Disabilities-UNCRPD) का भी हिस्सा है।
- **सामाजिक नज़रिया:** समाज का एक बड़ा वर्ग दिव्यांग व्यक्तियों को 'सहानुभूतिपूर्ण' और 'दया' की नज़र से देखता है, जिससे उन्हें सामान्य से अलग या 'अन्य' (Other) के रूप में देखे जाने और देश के तीसरे दर्जे के नागरिक के रूप में उनसे व्यवहार को बढ़ावा मिलता है।
  - इसके अलावा एक बड़ी समस्या समाज के एक बड़े वर्ग की मानसिकता से है जो दिव्यांग व्यक्तियों को एक दायित्व या बोझ के रूप में देखते हैं। इस प्रकार की मानसिकता से दिव्यांग व्यक्तियों के उत्पीड़न और भेदभाव के साथ मुख्यधारा से उनके अलगाव को बढ़ावा मिलता है।

आगे की राह:

- **समुदाय-आधारित पुनर्वास (CBR) दृष्टिकोण :** CBR प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल स्तर पर एक व्यापक दृष्टिकोण है जिसका उपयोग उन स्थितियों में किया जाता है जहाँ सामुदायिक स्तर पर पुनर्वास के लिये आवश्यक संसाधन उपलब्ध होते हैं।
  - CBR पद्धति यह सुनिश्चित करने के लिये आवश्यक है कि कोई भी दिव्यांग व्यक्ति अपनी शारीरिक और मानसिक क्षमताओं को अधिकतम स्तर तक बढ़ाने में सक्षम है, साथ ही उन्हें सभी अवसरों और सेवाओं की नियमित पहुँच सुलभ हो तथा उन्हें समुदाय में पूर्ण एकीकरण की स्थिति प्राप्त हो सके।
- **दिव्यांगता को लेकर जागरूकता में वृद्धि:** सरकारों, सामाजिक संस्थाओं और पेशेवर संगठनों द्वारा दिव्यांगता से जुड़ी द्वेषपूर्ण मानसिकता या सामाजिक भेदभाव को दूर करने के लिये व्यापक सामाजिक अभियान चलाने पर विचार करना चाहिये।
  - इस संदर्भ में मुख्यधारा की मीडिया ने फिल्मों (जैसे-तारे जमीं पर, बर्फी आदि) के माध्यम से दिव्यांग व्यक्तियों के सकारात्मक प्रतिनिधित्व के लिये सही मार्ग चुना है।
- **राज्यों के साथ साझेदारी:** गर्भवती महिलाओं की देखभाल के संदर्भ में व्यापक जागरूकता और ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सा सुविधाओं की उन्नत एवं सुलभ पहुँच सुनिश्चित करना दिव्यांगता की समस्या से निपटने के प्रयासों के दो महत्त्वपूर्ण स्तंभ हैं।
  - दिव्यांगता की समस्या से निपटने के इन दोनों कारकों की पहुँच सुनिश्चित करने के लिये राज्य सरकारों के सक्रिय सहयोग के साथ-साथ केंद्र सरकार को भी स्वास्थ्य क्षेत्र में व्यापक निवेश करना चाहिये। गौरतलब है कि भारतीय संविधान के तहत स्वास्थ्य को राज्य सूची में शामिल किया गया है।
- **मज़बूत इच्छाशक्ति और अकृत्रिम मंशा:**
  - दिव्यांगजन अधिकार अधिनियम, 2016 के लागू होने के बाद से इस अधिनियम के तहत निर्धारित आरक्षण को लागू करने में गड़बड़ी से जुड़े कई मामले देखने को मिले हैं।
  - कोई भी नया कानून अपने उद्देश्य में तभी सफल हो सकता है जब दिव्यांग लोगों को उनके लिये आरक्षित पदों पर नियुक्त करने हेतु संबंधित अधिकारियों द्वारा इस संदर्भ में मज़बूत इच्छाशक्ति दिखाई जाए।
  - इसके साथ ही भारत में एक संस्कृति विकसित करने की आवश्यकता है, जहाँ किसी भी बुनियादी ढाँचे का निर्माण करते समय दिव्यांग लोगों के हितों को भी ध्यान में रखा जाए।

नोट :

निष्कर्ष:

'दिव्यांग' या 'डिफरेंटली एबल्ड' जैसे शब्दों के प्रयोग मात्र से ही दिव्यांग लोगों के प्रति बड़े पैमाने पर सामाजिक विचारधारा को नहीं बदला जा सकता। ऐसे में यह बहुत महत्त्वपूर्ण है कि सरकार द्वारा नागरिक समाज और दिव्यांग व्यक्तियों के साथ मिलकर कार्य करते हुए एक ऐसे भारत के निर्माण का प्रयास किया जाए जहाँ किसी की दिव्यांगता पर ध्यान दिये बगैर सभी का स्वागत और सम्मान किया जाता है।

कुपोषण, COVID-19 और पोषण माह

संदर्भ:

हाल ही में केंद्र सरकार की एक महत्त्वपूर्ण योजना 'पोषण अभियान' ने अपनी स्थापना के 1000 दिन पूरे कर लिये हैं। पोषण अभियान भारत में कुपोषण से निपटने के लिये एक समग्र दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है।

इस कार्यक्रम के तहत सरकार ने आवश्यक पोषक खाद्य पदार्थों की आपूर्ति व्यवस्था को मज़बूत किया है ताकि अधिक-से-अधिक बच्चों को इसका लाभ प्राप्त हो और वे अपने जीवन में उपयुक्त विकास के साथ स्वस्थ और समृद्ध भविष्य की शुरुआत कर सकें। हालाँकि भारत ने कुपोषण को दूर करने के लिये सकारात्मक प्रयास किये हैं, परंतु यह समस्या अभी भी सबसे गंभीर चुनौती बनी हुई है, जो एक युवा भारत के वादे को मूलभूत स्तर पर अवरुद्ध करता है। इसके अतिरिक्त COVID-19 महामारी ने भारत द्वारा हाल के वर्षों में कुपोषण से निपटने की दिशा की गई प्रगति के लिये भी खतरा उत्पन्न किया है।

अत: वर्तमान में यह बहुत आवश्यक हो गया है कि कुपोषण की चुनौती से निपटने की प्रतिबद्धता को नवीनीकृत किया जाए।

भारत में कुपोषण:

- कुपोषण (Malnutrition) किसी व्यक्ति द्वारा ऊर्जा और/या पोषक तत्त्वों के सेवन में कमी, अधिकता या इसके असंतुलन को दर्शाता है।
- भारत में कुपोषण की गंभीर समस्या को इसी बात से समझा जा सकता है कि इससे निपटना सरकार के लिये राष्ट्रीय प्राथमिकता का विषय है।
- यूनिसेफ द्वारा संचालित व्यापक राष्ट्रीय पोषण सर्वेक्षण के आँकड़ों के अनुसार, देश में 5 वर्ष की आयु के लगभग आधे बच्चे नाटेपन या दुबलेपन से पीड़ित पाए गए थे।
- वर्ष 2019 में लैंसेट में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार, भारत में पाँच वर्ष से कम आयु के 1.04 मिलियन बच्चों की मृत्यु में 68% के लिये कुपोषण को उत्तरदायी बताया गया था।
- 'खाद्य एवं पोषण सुरक्षा विश्लेषण, भारत 2019' (Food and Nutrition Security Analysis, India, 2019) रिपोर्ट में भारत में गरीबी और कुपोषण के पीढ़ीगत प्रसार पर प्रकाश डाला गया है।
  - रिपोर्ट में गरीबी और कुपोषण के दुष्चक्र में फँसे समाज के सबसे गरीब तबके को दिखाया गया है जो कई पीढ़ियों के बाद भी इस समस्या से बाहर नहीं निकल पाया है।

गरीबी और कुपोषण का दुष्चक्र:

- भूख, एनीमिया और कुपोषण से पीड़ित गर्भवती महिलाएँ ऐसे बच्चों को जन्म देती हैं जो नाटेपन, कम वज़न जैसी समस्याओं से पीड़ित होते हैं या वे मानवीय क्षमता के अनुरूप विकास नहीं कर पाते।
- बाल्यावस्था के वर्षों में पोषक तत्त्वों की कमी बच्चों के शारीरिक और मानसिक विकास को प्रभावित कर सकती है, साथ ही यह उन्हें जीवन भर समाज के हाशिये पर रहने के लिये विवश कर सकती है।
- आवश्यक पोषक तत्त्वों के बगैर बच्चों का दिमाग पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो पाता है, इस कारण कुपोषण से प्रभावित बच्चे आगे चलकर जीवन में अपनी पूर्ण क्षमता के अनुरूप सफलता प्राप्त नहीं कर पाते।
- ऐसे वंचित बच्चे पढ़ाई में खराब प्रदर्शन करते हैं और भविष्य में इनकी आय भी कम होती है। अधिकांशत: ऐसे लोग आगे चलकर अपने बच्चों को उचित देखभाल की सुविधा उपलब्ध नहीं करा पाते हैं और गरीबी तथा कुपोषण का यह पीढ़ीगत संचरण जारी रहता है।

नोट :

कुपोषण की चुनौती और COVID-19:

- COVID-19 महामारी ने लाखों लोगों को गरीबी की स्थिति में धकेल दिया है, इसके साथ ही इसने एक बड़ी आबादी की आय में भारी कमी की है। यह महामारी आर्थिक रूप से भी वंचितों को बुरी तरह प्रभावित कर रही है, जो कि कुपोषण तथा खाद्य असुरक्षा के लिये सबसे अधिक सुभेद्य हैं।
- इसके अलावा महामारी-प्रेरित लॉकडाउन ने आवश्यक सेवाओं (जैसे कि आँगनबाड़ी केंद्रों के तहत पूरक आहार, मध्याह्न भोजन, टीकाकरण और सूक्ष्म पोषक अनुपूरण आदि) की आपूर्ति को बाधित किया है, जो कुपोषण के मामलों में व्यापक वृद्धि का कारण बन सकता है।

आगे की राह:

- शिशु एवं छोटे बच्चों के आहार (Infant and Young Child Feeding- IYCF) की प्रथाओं को बढ़ावा देना : गर्भाधान से लेकर शिशु के 2 वर्ष पूरे होने तक के पहले 1000 दिन एक व्यक्ति के जीवन में पोषण हस्तक्षेप के लिये सबसे महत्वपूर्ण अवधि को चिह्नित करते हैं।
- अत: पहले 1000 दिनों में प्राप्त पोषण का बच्चे के शारीरिक स्वास्थ्य, संज्ञानात्मक विकास, शैक्षणिक और बौद्धिक प्रदर्शन पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ेगा।

पहले 1000 दिन:

- पहले 1000 दिनों की शुरुआत गर्भ के एकल कोशिका के रूप में गर्भाधान से होती है और यह भ्रूण अवस्था तथा प्रसवोत्तर अवधि, जिसमें बाल्यावस्था एवं शैशवावस्था शामिल है, के दौरान एक तीव्र, जटिल और नाटकीय विकास और विभेदन की प्रक्रिया के तहत जारी रहता है।

शिशु एवं छोटे बच्चों का आहार (Infant and Young Child Feeding- IYCF):

- **जन्म के पहले एक घंटे में स्तनपान की शुरुआत:** माँ का पीला दूध बच्चे के पोषण और उसे अनेक संक्रमणों से बचाने के लिये बहुत ही महत्त्वपूर्ण होता है।
- **जीवन के पहले 6 माह तक अनन्य स्तनपान:** यह भावनात्मक संबंध और रोगों से सुरक्षात्मक प्रतिरक्षा के अलावा वृद्धि और विकास के लिये महत्त्वपूर्ण है।
- **6 माह की आयु में समय पर पूरक आहार की शुरुआत:** जन्म से 6 माह की अवधि (जब अधिकांश शिशुओं को पूरक आहार शुरू करने के लिये आवश्यक कौशल प्राप्त हो जाता है) के बाद दूध के अलावा धीरे-धीरे ठोस भोजन देने की शुरुआत करना।
- **6 माह से 2 वर्ष तक के बच्चों के लिये आयु-उपयुक्त खाद्य पदार्थ:** इस दौरान खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता, मात्रा और आवृत्ति के साथ स्वच्छता, विशेष रूप से हाथ धोने का अभ्यास आदि भी महत्त्वपूर्ण कारक हैं।
- शैशवावस्था के बाद शिशु खाद्य पदार्थों के चयन में स्वायत्तता की कवायद शुरू करते हैं। उनकी स्वायत्तता का सम्मान करने और खाने के व्यवहार को प्रोत्साहित करने के लिये पौष्टिक खाद्य पदार्थों की व्यापक व्यवस्था की जानी चाहिये।
- **पोषण अभियान का अनुकरण:** प्रधानमंत्री के नेतृत्त्व में सरकार द्वारा शुरू किये गए पोषण अभियान ने कुपोषण की चुनौती से निपटने के प्रयासों को मज़बूती प्रदान की है।
  - इस उदाहरण से सीख लेते हुए राष्ट्रीय स्तर पर प्रधानमंत्री के अतिरिक्त राज्य स्तर पर मुख्यमंत्री, ज़िला स्तर पर डीएम और गाँव स्तर पर पंचायत के माध्यम से पोषण और खाद्य सुरक्षा से जुड़े नेतृत्त्व को मज़बूत किया जाना चाहिये।
- **समग्र विकास सुनिश्चित करना:** नीति, दूरदर्शिता और रणनीतियों के संदर्भ में भारत के पास पहले से ही विश्व की कुछ सबसे बड़ी सार्वजनिक बाल विकास परियोजनाएँ हैं जैसे- एकीकृत बाल विकास योजना, मध्याह्न भोजन कार्यक्रम और सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) आदि।

नोट :

- **बहु हितधारक दृष्टिकोण:** वर्तमान में सभी हितधारकों द्वारा पोषण-विशिष्ट और संवेदनशील क्षेत्रों पर एक रणनीतिक, समायोजित कार्य योजना विकसित करने की आवश्यकता है।
  - इसके अलावा पोषण संबंधी योजनाओं के लिये अपनी वित्तीय प्रतिबद्धताओं को बनाए रखने के साथ कमज़ोर समुदायों, विशेष रूप से झुग्गियों में रहने वाली महिलाओं तथा बच्चों, प्रवासियों, जनजातीय क्षेत्रों की आबादी और उच्च कुपोषण दर वाले ज़िलों में पोषण सुरक्षा के लिये अतिरिक्त धनराशि जारी किये जाने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष:

किसी भी बड़ी आबादी में पोषण संबंधी हस्तक्षेपों का प्रभाव दिखाई देने में काफी समय लगता है, परंतु एक बार प्रभावी होने पर ये प्रयास व्यापक पीढ़ीगत बदलाव ला सकते हैं। देश में पोषण की पहुँच में व्याप्त बाधाओं को दूर कर समाज के सभी वर्गों के बच्चों को प्रतिस्पर्द्धा का समान अवसर उपलब्ध कराने के साथ देश के विकास के लिये एक मज़बूत आधार प्रदान किया जा सकेगा।

दृष्टि The Vision

नोट :